**Master of Arts (Hindi)**

**Semester – II**

**Paper Code –**

# आधुनिक गद्य साहित्य–II

# परिचय

प्रस्तुत पुस्तक 'आधुनिक गद्य–साहित्य (ब) विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित एम0 ए0 हिंदी (द्वितीय सेमेस्टर) के नवीनतम पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई है। इसमें दो प्रमुख नाटकों, एक उपन्यास तथा विभिन्न विषयों पर लिखे गए सात निबन्धों का समावेश हुआ है।

प्रस्तुत पुस्तक चार इकाईयों में विभक्त है। पहली इकाई में प्रसाद रचित नाटक 'चन्द्रगुप्त' नाटक में संस्कृत नाटकों एवं पारसी थियेटर के प्रभावानुरूप संवादों के मध्य सरस गीतों का प्रयोग है। दूसरी इकाई में मोहन राकेश का नाटक 'आधे–अधूरे' है। आधे–अधूरे नाटक के संवाद घर के बैठक में बोले जाने वाले संवादों के एक नग्न–यथार्थ का साक्षात्कार कराते हैं। तीसरी इकाई में विष्णु प्रभाकर द्वारा रचित जीवनी परक उपन्यास 'आवारा मसीहा' है। 'आवारा मसीहा' में बंगाल के प्रसिद्ध लेखक शरतचन्द्र के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। चौथी इकाई में विभिन्न विषयों पर आधारित निबन्ध हैं। इन निबंधों में भावात्मक, समीक्षात्मक, व्यंग्यात्मक, वर्णनात्मक आदी भाव दृष्टिगत होते हैं।

सरल एवं प्रवाहमयी भाषा के द्वारा प्रस्तुत यह सामग्री छात्रों के लिए निश्चित रूप से उपयोगी एवं ज्ञान–वर्द्धक होगी।

## आधुनिक गद्य–साहित्य (ब)

### इकाई–1 चन्द्रगुप्त (जयशंकर प्रसाद)

चन्द्रगुप्त– व्याख्या–खण्ड, चरित्र–चित्रण, चन्द्रगुप्त की ऐतिहासिकता, नायकत्व, राष्ट्रीयता, रंगमंचीयता।

### इकाई–2 'आधे–अधूरे' (मोहन राकेश)

आधे–अधूरे– व्याख्या–खंड, नाटकों की विकास यात्रा, चरित्र–चित्रण, आधुनिकता बोध, परिवार संस्था, प्रयोग–धर्मिता, भाषा–शैली।

### इकाई–3 'आवारा मसीहा' (विष्णु प्रभाकर)

'आवारा मसीहा' –व्याख्या खंड, जीवनी साहित्य में आवारा मसीहा का स्थान, आवारा मसीहा की रचना के प्रेरक तत्त्व, आवारा मसीहा के संदर्भ में शरतचन्द्र की स्त्री दृष्टि।

# विषय सूची

## आधुनिक गद्य–साहित्य (ब)

**इकाई–1 चन्द्रगुप्त (जयशंकर प्रसाद)** **(5–36)**

चन्द्रगुप्त– व्याख्या–खण्ड, चरित्र–चित्रण, चन्द्रगुप्त की ऐतिहासिकता, नायकत्व, राष्ट्रीयता, रंगमंचीयता।

**इकाई–2 'आधे–अधूरे' (मोहन राकेश)** **(37–73)**

आधे–अधूरे– व्याख्या–खंड, नाटकों की विकास यात्रा, चरित्र–चित्रण, आधुनिकता बोध, परिवार संस्था, प्रयोग–धर्मिता, भाषा–शैली।

**इकाई–3 'आवारा मसीहा' (विष्णु प्रभाकर)** **(74–112)**

'आवारा मसीहा' –व्याख्या खंड, जीवनी साहित्य में आवारा मसीहा का स्थान, आवारा मसीहा की रचना के प्रेरक तत्त्व, आवारा मसीहा के संदर्भ में शरतचन्द्र की स्त्री दृष्टि।

**इकाई–4 पाठ्यक्रम में निर्धारित निबंधों का मूल प्रतिपाद्य एवं शिल्प** **(113–190)**

## इकाई 1

# चन्द्रगुप्त (जयशंकर प्रसाद)

---

### इकाई की रूपरेखा


1.0 परिचय

1.1 इकाई के उद्देश्य

1.2 पात्र परिचय

1.3 व्याख्यात अंश

1.3.1 गद्य

1.3.2 पद्य

**1.4 चरित्र–चित्रण**

1.4.1 चन्द्रगुप्त

1.4.2 चाणक्य

1.4.3 पर्वतेश्वर

1.4.4 राक्षस

1.4.5 अलका

1.4.6 सुवासिनी

1.4.7 कल्याणी

1.4.8 मालविका

**1.5 आलोचना**

1.5.1 कथानक

1.5.2 अभिनेयता

1.5.3 गीत योजना

1.5.4 नाटक में ऐतिहासिकता एवं कल्पना का समन्वय

1.5.5 संवाद योजना

1.5.6 चन्द्रगुप्त नाटक में अंतर्द्वंद्व योजना

1.5.7 राष्ट्रीय चेतना

1.5.8 राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना

1.5.9 भाषा–शैली

**1.6 सारांश**

**1.7** मुख्य शब्दावली

**1.8** 'अपनी प्रगति जांजिए के उत्तर

**1.9** अभ्यास हेतु प्रश्न

**1.10** आप ये भी पढ़ सकते हैं

## 1.0 परिचय

जयशंकर प्रसाद द्वारा 1931 में इस रचना का प्रणयन हुआ। यह ऐतिहासिक नाटक है। यह भारतीयों को जागरण का संदेश देने वाला नाटक है जिसकी स्वतंत्रता से पूर्व महत्त्वपूर्ण भूमिका थी और स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में भी यह प्रासंगिक है क्योंकि राष्ट्र–प्रेम एवं राष्ट्र भक्ति, त्याग, बलिदान का संदेश देने वाली यह महत्त्वपूर्ण कृति है। ऐतिहासिक नाटकों की श्रृंखला में यह अपना विशेष स्थान रखता है।

## 1.1 उद्देश्य

'चंद्रगुप्त' नाटक को पढ़कर छात्र

राष्ट्र हित में जीवन समर्पित करने की प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

स्वतंत्रतापूर्व के भारतीय समाज और राजाओं के परिवेश तथा मानसिकता से परिचित होंगे;

साहित्यिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का दर्शन करेंगे;

राष्ट्र प्रेम एवं व्यक्तिगत प्रेम के अद्भुत स्वरूप का परिचय प्राप्त करेंगे।

## 1.2 पात्र–परिचय

### पुरुष पात्र

| | |
|---|---|
| चाणक्य (विष्णुगुप्त) | मौर्य साम्राज्य का निर्माता |
| चन्द्रगुप्त | मौर्य सम्राट |
| नन्द | मगध सम्राट |
| राक्षस | मगध का अमात्य |
| वररुचि (कात्यायन) | मगध का अमात्य |
| शकटार | मगध का मंत्री |

| | |
|---|---|
| आम्भीक | तक्षशिला का राजकुमार |
| सिंहरण | मालवगण–मुख्य का कुमार |
| पर्वतेश्वर | (ग्रीक ऐतिहासिकों का पोरस) पंजाब का राजा |
| सिकन्दर | ग्रीक–विजेता |
| फिलिप्स | सिकन्दर का क्षत्रप |
| मौर्य–सेनापति | चन्द्रगुप्त का पिता |
| एनीसाक्रीटीज | सिकन्दर का सहचर |
| देवबल | मालव गणतन्त्र का पदाधिकारी |
| गण मुख्य | मालव गणतन्त्र का पदाधिकारी |
| साइबर्टियस | यवन–दूत |
| मेगस्थनीज | यवन–दूत |
| गान्धार नरेश | आम्भीक का पिता |
| सिल्यूकस | सिकन्दर का सेनापति |
| स्त्री पात्र | |
| अलका | तक्षशिला की राजकुमारी |
| सुवासिनी | शकटार की कन्या |
| कल्याणी | मगध–राजकुमारी |
| नीला | कल्याणी की सहेली |
| लीला | कल्याणी की सहेली |
| मालविका | सिन्धु देश की कुमारी |
| कार्नेलिया | सिल्यूकस की कन्या |
| मौर्य पत्नी | चन्द्रगुप्त की माता |
| एलिस | कार्नेलिया की सहेली |

### 1.3 व्याख्यात अंश

#### 1.3.1 गद्य

**1. चाणक्य :**

''तुम मालव हो और यह मागध; यही तुम्हारे मान का अवसान है न? परंतु आत्म–सम्मान इतने ही से संतुष्ट नहीं होगा। मालव और मागध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त का ना लोगे तभी वह मिलेगा। क्या तुम नहीं देखते हो कि आगामी दिवसों में, आर्यावर्त के सब स्वतंत्र राष्ट्र एक के अनंतर दूसरे विदेशी विजेता से पद–दलित होंगे। आज

जिस व्यंग्य को लेकर इतनी घटना हो गई है, वह बात भावी गांधार–नरेश आम्भीक के हृदय में, शल्य के समान चुभ गई है। पंचनद नरेश पर्वतेश्वर के विरोध के कारण, यह क्षुद्र–हृदय आम्भीक यवनों का स्वागत करेगा और आर्यावर्त का सर्वनाश होगा।'

**संदर्भ :** प्रस्तुत पंक्तियाँ महाकवि, नाटककार जयशंकर प्रसाद के नाटक 'चन्द्रगुप्त' से ली गई हैं।

**प्रसंग :** तक्षशिला के गुरुकुल के मठ से चाणक्य और सिंहरण बातें करते हुए निकलते हैं। सिंहरण राज्य में चल रहे षड़यंत्रों की ओर इशारा करता है तभी आम्भीक, जो देशद्रोही और कदाचारी है वहाँ आ जाता है और सिंहरण को षड़यंत्र बताने का आदेश देता है। वह चाणक्य का भी अपमान करता है तभी चन्द्रगुप्त बीच–बचाव के लिए आ जाता है। चाणक्य के आदेश से अलका अपने भाई आम्भीक को ले जाती है और चन्द्रगुप्त चाणक्य से कहता है कि वह सिंहरण से सदैव मित्रता निभाएगा क्योंकि हम मागध हैं। चन्द्रगुप्त द्वारा अपने प्रदेश का परिचय देकर गौरवान्वित होने पर चाणक्य ने उपरोक्त पंक्तियाँ कही।

**व्याख्या :** चाणक्य चन्द्रगुप्त से कहते हैं तुम मालव हो और आम्भीक मागध है इसलिए तुम उसके साथ शस्त्र परीक्षा करना चाहते हो, उसके व्यवहार से तुम्हारी मानहानि हुई ऐसा समझते हो। प्रादेशिक स्तर पर जन्मभूमि का मान बढ़ाने की बात करने से कुछ नहीं होगा। यह बात यह सोच देशवासियों को बांटती है। आत्मसम्मान को केवल प्रदेश की रक्षा से संतुष्ट नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे पूरे देश की, आर्यावर्त की बात को एक ही दृष्टि से सोचना चाहिए। जो मगध का देशद्रोही है वह पूरे आर्यावर्त का देशद्रोही है। अतः जब मालव, मगध भूलकर दृष्टि और चिंतन को विस्तार दोगे, आर्यावर्त की बात सोचोगे तभी आत्मसम्मान और मान को संतुष्टि मिलेगी उनका विकास होगा। चाणक्य कहते हैं चन्द्रगुप्त क्या तुम अपनी दूरदृष्टि से यह नहीं देख रहे हो कि आने वाले समय में आर्यावर्त के सभी स्वतंत्र राष्ट्र विदेशी विजेताओं से हार जायेंगे। एक–एक कर उनकी स्वतंत्रता छिन जाएगी। आज तुमने जिस आम्भीक को एक व्यंग्य पर लड़ते और जहर उगलते देखा है वह आम्भीक भविष्य में गांधार नरेश बनेगा और शत्रु यवनों से मित्रता करेगा उनका स्वागत करेगा क्योंकि उसका हृदय क्षुद्र है और तुम लोगों की (चंद्रगुप्त और सिंहरण) बातें उसके हृदय में कांटे की तरह चुभ गई हैं। वह पंचनद नरेश पर्वतेश्वर का विरोधी है। अतः यवनों से मित्रता कर वह तुम लोगों से पूरी तरह शत्रुता निभाएगा।

2. महापद्म का जारज पुत्र नंद केवल शस्त्र–बल और कूटनीति के द्वारा सदाचारों के शिर पर ताण्डव नृत्य कर रहा है। यह सिद्धांत–विहीन नृशंस, कभी बौद्धों का पक्षपाती, कभी वैदिकों का अनुयायी बन कर दोनों में भेदनीति चला कर बल संचय करता रहता है। मूर्ख जनता धर्म की ओट में नचाई जा रही है।

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** कुसुमपुर के सरस्वती मंदिर के एक कुंज का दृश्य है। दो ब्रह्मचारी वहाँ आते हैं और आपस में बातें करते हुए मगध राज्य के पतन पर चिंता व्यक्त करते हैं। एक ब्रह्मचारी कहता है कि मगध को उन्माद हो गया है। वह जनता के अधिकारों को अत्याचारियों के हाथ में सौंपकर निश्चिंत होकर स्वप्न में डूबा है राजा भोगी–विलासी और मूर्ख है। इस पर दूसरा ब्रह्मचारी उपरोक्त पंक्तियाँ कहता है।

**व्याख्या** : महापद्म का जारज पुत्र नंद अर्थात् नंद, जो महापद्म की वैधानिक संतान नहीं है, बल्कि पत्नी के अतिरिक्त किसी नीच कुल की स्त्री से उत्पन्न संतान है, सदाचारियों के सिर पर तांडव कर रहा है। उन पर अत्याचार कर रहा है क्योंकि नीच कुल के रक्त संस्कार उसके भीतर हैं। अतः वह अमानवीय और कदाचारी है, वह असभ्य और अहंकारी है। जैसे छोटी नदियों, उथली नदियों में थोड़ी ही वर्षा से बाढ़ आ जाती है, उसी तरह यह निम्न कुलीन नंद अपनी कूटनीति एवं शस्त्रों के बल पर सदाचारियों का जीना दुश्वार कर रहा है। वह नृशंस है, क्रूर है। उसका कोई सिद्धांत नहीं है। सम्राट है लेकिन निजी स्वार्थ–पूर्ति और सुखों के लिए वह चालें चलता है।

कभी वह बौद्धों का पक्षधर बन जाता है और कभी वैदिकों का अनुयायी बन जाता है और दोनों को भेदनीति से लड़वाकर अपनी शक्ति बढ़ाता है। मूर्ख जनता धर्म के नाम पर छली जा रही है और नंद की कूटनीतियों को नहीं समझती। बौद्ध और वैदिक कोई भी लड़े मृत्यु जनता की होती है। उसके सुख–साधनों की हानि होती है। नंद धर्म के नाम पर जनता को ठग रहा है।

### 3. राक्षस

राजकुमारी ! राजनीति महलों में नहीं रहती, इसे हम लोगों के लिए छोड़ देना चाहिए। उद्धृत पर्वतेश्वर अपने गर्व का फल भोगे और ब्राह्मण चाणक्य....! परीक्षा देकर ही कोई साम्राज्य नीति समझ लेने का अधिकारी नहीं हो जाता।

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** मगध की राजसभा में नंद राक्षस तथा अन्य सभासदों के साथ बैठा है। चाणक्य वहाँ प्रवेश करके सूचना देता है कि यवनों की सेना ने आक्रमण कर दिया है और वह उत्तरापथ के छोटे–छोटे स्वतंत्र गणराज्यों को रौंदती और विजेता बनती हुई आगे बढ़ रही है। पंचनद के महाराज पर्वतेश्वर अकेले उनका सामना करने के लिए खड़े हैं। तभी सभा में नंद की पुत्री कल्याणी प्रवेश करती है और कहती है कि इस समय अपने शत्रु और घमण्डी पर्वतेश्वर का साथ देने के लिए मैं सेना लेकर जाऊंगी और उस क्षत्रिय को नीचा दिखाऊंगी, साथ ही यवनों को मगध तक आने से रोकूंगी। दिखा दूंगी कि राजकन्या कल्याणी किसी क्षत्राणी से कम नहीं है। राजकुमारी की बात सुनकर सभा में बैठे राक्षस ने उस पर व्यंग्य करते हुए उपरोक्त पंक्तियाँ कहीं।

**व्याख्या :** राक्षस कहता है राजकुमारी राजनीति महलों में नहीं रहती अर्थात् यह अखाड़े में, पुरुषों के साथ रहने वाली चीज है, महिलाओं को इसकी समझ नहीं होती। इसलिए इसे हम पुरुषों के लिए ही छोड़ दें। पर्वतेश्वर उद्दण्ड और घमण्डी है। अगर वह यवनों से अकेला लड़ने के लिए खड़ा है और अहंकारवश हमसे सहायता की याचना नहीं कर रहा है तो हम क्यों जाएँ। उस अकेले को अगर यवन सेना कुचल देती है तो कुचले। अपनी करनी का फल भुगते और चाणक्य को उससे हमदर्दी है, सहानुभूति है, तो वह भी जाए और अपनी करनी का फल भोगे। चाणक्य की बात या सूचना पर क्या विश्वास करना। यह स्वयं को बलशाली समझता है लेकिन गुरुकुल में जाकर अध्ययन–अध्यापन कर लेने और परीक्षा में पास हो जाने मात्र से ही कोई राजनीति का जानकर नहीं हो सकता।

साम्राज्य नीति मैदान का खेल है, दिमाग का खेल है। पढ़ने–लिखने से ही कोई इसका जानकार नहीं बन जाता। इन पंक्तियों में राक्षस कल्याणी और चाणक्य दोनों पर व्यंग्य करता है।

4. चाणक्य — सावधान नन्द! तुम्हारी धर्मान्धता से प्रेरित राजनीति आँधी की तरह चलेगी, उसमें नन्दवंश समूल उखड़ेगा। नियति–सुंदरी के भवों में बल पड़ने लगा है। समय आ गया है कि शूद्र राज–सिंहासन से हटाए जायें और सच्चे क्षत्रिय मूर्धाभिषिक्त हों।

नन्द : — यह समझ कर कि ब्राह्मण अवध्य है, तू मुझे भय दिखलाता है। प्रतिहार, इसकी शिखा पकड़कर इसे बाहर करो!

(प्रतिहार उसकी शिखा पकड़ कर घसीटता है, वह निश्शंक और दृढ़ता से कहता है) खींच ले ब्राह्मण की शिखा! शूद्र के अन्न से पले हुए कुत्ते! खींच ले! परन्तु यह शिखा नन्दकुल की काल–सर्पिणी है, वह तब तक न बंधन में होगी जब तक नंद–कुल निःशेष न होगा।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : मगध की राजसभा में राक्षस चाणक्य की राजनीतिक समझ पर व्यंग्य करता है। नंद के सामने यह रहस्य

भी खुलता है कि चाणक्य चणक का पुत्र है जो विद्रोही था। चंद्रगुप्त आकर सबको शांत करने का प्रयत्न करता है तो नन्द दोनों का अपमान करते हुए उन्हें सभा से बाहर निकालने का आदेश देता है। तब चाणक्य और नंद में यह वार्तालाप होता है।

**व्याख्या :**

ब्राह्मण चाणक्य शूद्र नंद के द्वारा अपमानित किए जाने पर तिलमिलाकर उसे चेतावनी देते हुए कहता है कि सावधान हो जाओ नंद तुम धर्म के नाम पर अंधी जनता को मूर्ख बना कर धर्म के नाम पर जो राजनीति कर रहे हो वह एक ऐसी आंधी बन जाएगी कि उससे तुम्हारा पूरा नंद वंश उखड़ जाएगा। तुम्हारी चालें तुम्हें ही ले डूबेंगी। एक दिन जनता जागेगी और पलटकर तुम पर वार करेगी। तुम्हारी कुटिल चालें और अत्याचार देखकर विधाता रुष्ट हो रहा है। भाग्य रूपी सुंदरी जो आज तक तुम्हारे साथ यश, कीर्ति, समृद्धि बनकर बैठी है उसकी भवों में भी बल पड़ने लगे हैं। वह चिंता में पड़ गई है। तुम्हारी कुटिलताएँ उसे तुम्हारा विरोध करने के लिए प्रेरित कर रही है। हे शूद्र राजन समय आ गया है जब राजसिंहासनों से कुसंस्कारी शूद्र हटाए जाए और उत्तम क्षत्रियों को सम्राट बनाया जाय क्योंकि वर्ण व्यवस्था के अनुसार शूद्र का कार्य सेवा का है और क्षत्रिय अपने बल पौरुष से राज्य करेंगे।

नंद चाणक्य की बात सुनकर गुस्से से उबल पड़ता है और सेवकों से कहता है कि इस ब्राह्मण की चोटी (शिखा) पकड़कर इसे महल से बाहर कर दो। वह चाणक्य से कहता है कि तू यह समझकर मुझे डरा रहा है कि तू ब्राह्मण है और ब्राह्मण अवध्य होते हैं। उन्हें कोई नहीं मार सकता। मगर ये तेरी गलतफहमी है। मैं तुझे मार सकता हूँ। सेवक चाणक्य की चोटी पकड़कर घसीटता है तब चाणक्य उसे भी धिक्कारते हुए कहता है कि खींच ले ब्राह्मण की शिखा को क्योंकि तुझमें न्याय—अन्याय और अच्छे—बुरे को समझने का विवके नहीं रहा क्योंकि तू शूद्र का अन्न खाकर बड़ा हुआ कुत्ता है। कुत्ता स्वामी के सामने पूंछ हिलाता है तू भी अपने स्वामी का कहना मान। परंतु मेरी शिखा रहेगी जब तक नंद कुल का सर्वनाश नहीं हो जाता। यह मेरी प्रतिज्ञा है। प्रस्तुत अंश में चाणक्य की इस प्रतिज्ञा का साक्षात्कार हो रहा है जिसके अंतर्गत उसने न केवल नंदवंश को निर्मूल किया अपितु तत्कालीन योग्यतम शासक भी प्रदान किया।

**5. चाणक्य** भिक्षोपजीवी ब्राह्मण! क्या बौद्धों का संग करते—करते तुम्हें अपनी गरिमा का संपूर्ण विस्मरण हो गया। चाटुकारों के सामने हाँ में हाँ मिलाकर, जीवन की कठिनाइयों से बच कर, मुझे भी कुत्ते का पाठ पढ़ाना चाहते हो! भूलो मत, यदि राक्षस देवता हो जाए तो उसका विरोध करने के लिए मुझे ब्राह्मण से दैत्य बनना पड़ेगा।

**वररुचि :** ब्राह्मण हो भाई! त्याग और क्षमा के प्रमाण—तपोनिधि ब्राह्मण हो!

**चाणक्य :** त्याग और क्षमा, तप और विद्या, तेज और सम्मान के लिए हैलोहे और सोने के सामने सिर झुकान के लिए हम लोग ब्राह्मण नहीं बने हैं। हमारी दी हुई विभूति से हमीं को अपमानित किया जाए, ऐसा नहीं हो सकता। कात्यायन! अब केवल पाणिनि से काम न चलेगा। अर्थशास्त्र और दण्ड—नीति की आवश्यकता है।

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** मगध के बंदीगृह (जेल) में चाणक्य बंद है वहाँ राक्षस और वररुचि उससे मिलने आते हैं तथा वररुचि चाणक्य से विद्रोह की भावना त्याग देने की बात कहता है तब चाणक्य उसे व्यंग्यपूर्ण कथन से धिक्कारते हैं।

**व्याख्या :** चाणक्य वररुचि से कहते हैं भिक्षा मांग कर जीविका चलाने वाले ब्राह्मण क्या तुम ब्राह्मणत्व की गरिमा को भूल गए हो? बौद्धों का साथ देते हुए, राक्षस और नंद जैसे चाटुकारी, अत्याचिरयों की हाँ में हाँ मिला रहे हो ताकि

तुम्हारा जीवन सुखी–सम्पन्न हो, कठिनाइयों से बचा रहे? पेट भरने के लिए लात खाकर, अपमानित होकर भी पूंछ हिलाना कुत्ते का कार्य है। तुम ऐसा ही कर रहे हो और मुझे भी कुत्ता बनने का पाठ पढ़ाना चाहते हो। याद रखो अगर राक्षस देवता हो जाएं तो मुझे ब्राह्मण से दैत्य बनना पड़ेगा ताकि मैं उनका विरोध कर सकूँ। वररुचि चाणक्य के धिक्कार का बुरा न मानते हुए उसे कहता है कि तुम तपस्वी ब्राह्मण हो और त्याग तथा क्षमा ही तुम्हारे आभूषण हैं। तब चाणक्य कहता है त्याग, क्षमा, तप और विद्या किसी सम्मानित और तेजस्वी व्यक्तित्व के सामने सिर झुकाने के लिए बने हैं। लोहे की तलवारों और सोने के सिंहासनों के सामने वे झुकते नहीं। हम ब्राह्मण हैं हमारी दी गई शस्त्र और शास्त्र विद्या जैसी अनमोल विभूतियों से ये हमारा ही अपमान करेंगे तो यह सहन नहीं किया जाएगा। चाणक्य वररुचि को कात्यायन कहकर संबोधित करते हुए कहते हैं जब केवल पाणिनि जैसे व्याकरण ग्रंथों से भाषा की शुद्धि–अशुद्धि बताने से काम नहीं चलेगा। अब हम ब्राह्मणों को अपनी और अपनी जन्मभूमि, देशभूमि की रक्षा करने के लिए अर्थशास्त्र और दण्डनीति का भी आश्रयय लेना पड़ेगा तभी इस राक्षस और नंद जैसे अत्याचारियों को सबक मिलेगा। इन पंक्तियों में चाणक्य ने एक प्रकार से ब्राह्मण और उसके कर्त्तव्यों को परिभाषित किया है, जो कुपथगामी राजसत्ता को सुपथ पर लाने का प्रयास न करे और केवल भिक्षा मांगता रहे, ऐसा ब्राह्मण बनना चाणक्य के स्वीकार नहीं।

**6. अलका :** महाराज! मुझे दण्ड दीजिए, कारागार में भेजिए, नही ंतो मैं मुक्त होने पर भी यही करूँगी। कुलपुत्रों के रक्त से आर्यावर्त की भूमि सिंचेगी। दानवी बन कर जननी जन्मभूमि अपनी सन्तान को खाएगी। महाराज! आर्यावर्त के सब बच्चे आम्भीक–जैसे नहीं होंगे। वे इसकी मान–प्रतिष्ठा और रक्षा के लिए तिल–तिल कट जाएंगे। स्मरण रहे, यवनों की विजयवाहिनी के आक्रमण को प्रत्यावर्तन बनाने वाले यही भारत–संतान होंगे। तब बचे हुए क्षतांग वीर, गांधार को भारत के द्वार रक्षक को विश्वासघाती के नाम से पुकारेंगे और उसमें नाम दिया जायेगा मेरे पिता का! आह! सुनने के लिए मुझे जीवित न छोड़िये, दण्ड दीजिए मृत्युदण्ड!

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** गांधार नरेश के कक्ष में उसकी पुत्री अलका को लेकर यवन प्रवेश करता है और बताता है कि हम चढ़ाई करने के लिए जो पुल बनवा रहे हैं उसका मानचित्र इन्होंने एक स्त्री से बनवा लिया है। जब मैंने मांगा तो इन्होंने वह मानचित्र एक युवक को दिया और उसे वहाँ से जाने को कह दिया। चूंकि मानचित्र देखकर ये हमारे सारे गोपनीय कार्य व्यापार को जान गई है इसलिए इन्हें (अलका) बंदी बनाना अनिवार्य था। आम्भीक भी देशद्रोहियों के साथ शामिल था महाराज। अलका अपनी पुत्री को छोड़ देने की बात कहते हैं। इस पर अलका ने ये पंक्तियाँ कही।

**व्याख्या :** अलका कहती है महाराज मुझे दण्ड दीजिए, कारागार में बंदी करवा दीजिए, अन्यथा मै। मुक्त रहकर वही करूंगी जो मैंने आज किया है। मैं अपने राज्य के विरूद्ध चल रहे षड़यंत्रों का पता लगाऊंगी और देशभक्त मित्रों के साथ मिलकर निष्फल करने का प्रयत्न करूंगी इसलिए मुझे मुक्त मत रखिए अन्यथा मैं अपने भाई के (आम्भीक के) षड़यंत्रों और देशद्रोह को चुनौती दूंगी। जब इस धरती की कुछ संतानें दानव बनकर अपने रक्त संबंधों को मिटाने पर तुल जाएंगी तो इसी धरती के कुछ सपूत इन दानवों को मौत के घाट उतार देंगे और धरती उन के रक्त से लाल हो जाएगी, महाराज! इस धरती के सभी लाल आम्भीक जैसे देशद्रोही और और स्वार्थी नहीं हैं। वे अपनी धरती के लिए, अपनी धरती मां की मान–पतिष्ठा और रक्षा के लिए अपने प्राणों को उत्सर्ग कर देंगे। याद रहे महाराज यवनों की विजयी सेना के आक्रमण को निष्फल बनाने वाली भारत की संतानें होंगी जो लड़ते–लड़ते मर जाएंगी। विजयी यवनों के बीच जो घायल क्षत–विक्षत, विकलांग और देशभक्त बचेंगे वे गांधार को जो भारत का

द्वार है, तथा गांधार प्रदेश को विश्वासघाती के नाम से पुकारेंगे। उन विश्वासघातियों में आपका यानि मेरे पिता का भी नाम होगा। (अलका चुनौती देती हुई कराह उठती है) मेरे पिता को लोग विश्वासघाती कहेंगे तो मुझे लज्जा से गड़ जाना होगा पिताजी, इसलिए ऐसा दिन देखने से पहले मैं मर जाना पसंद करूंगी। आप मुझे जीवित न छोड़ें, मृत्युदण्ड दे दें। क्योंकि आप स्वयं देशद्रोहियों का साथ छोड़ेंगे नहीं, अपने पुत्र मोह में आम्भीक के देशद्रोह को भी प्रश्रय देंगे। इसलिए मैं ही अपना जीवन समाप्त करना चाहती हूँ। देशद्रोही की बेटी और बहन कहला कर तो जीवित रहने से मर जाना अच्छा है। अपने लिए मृत्युदण्ड मांगते हुए अलका ने अपने देशद्रोही पिता की प्रतारण इन वाक्यों में की है।

**1. दण्ड्यायन :**

> मेरी आवश्यकतायें परमात्मा की विभूति प्रकृति पूरा करती है। उसके रहते दूसरों का शासन कैसा?
>
> समस्त आलोक, चैतन्य और प्रणशक्ति, प्रभु की दी हुई है। मृत्यु के द्वारा वही इसको लौटा लेता है। जिस वस्तु को मनुष्य दे नहीं सकता उसे ले लेने की स्पर्धा से बढ़ कर दूसरा दम्भ नहीं। मैं फल–मूल खाकर, अंजलि से जलपान कर, तृण शय्या पर आंख बंद किए सोए रहता हूँ। न मुझसे किसी को डर है न मुझको डरने का कारण है। तुम यदि हठात् मुझे ले जाना चाहो तो केवल मेरे शरीर को ले जा सकते हो, मेरी स्वतंत्र आत्मा पर तुम्हारे देवपुत्र का भी अधिकार नहीं हो सकता।

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** सिंधु के तट पर एक तपस्वी दण्ड्यायन का आश्रम है। वहाँ सिकंदर का साथी एनिसाक्रटीज आता है और तपस्वी से कहता है कि जगत् विजेता सिकंदर आपका उपदेश सुनना चहते हैं, चलिए। इस पर दाण्ड्यायन उसे कहते हैं कि सिंकदर अभी झेलम भी पार नहीं कर पाया है और स्वयं को जगत विजेता करने लगा। मैं लोभ, भय या सम्मान के लिए किसी के पास नहीं जाता। तपस्वी के मना करने पर एनिसाक्रटीज उसे दण्ड का भय दिखाता है तब तपस्वी ने उपरोक्त पंक्तियाँ कही हैं।

**व्याख्या :** एनिसॉक्रटीज दाण्ड्यायन से कहता है कि यदि आप सिकंदर को उपदेश देने नहीं चलेंगे तो वे आपको दण्ड देंगे। इस पर दाण्ड्यायन कहते हैं कि मै। इस धरती पर केवल परमात्मा का शासन मानता हूँ किसी और का नहीं। मेरी सारी आवश्यकताएं यह प्रकृति पूरा करती है। धरती, आकाश, नदी, पर्वत, जड़–चेतन आदि। यह प्रकृति परमात्मा की अनुपम देन है। यह सारा आलोक अर्थात् प्रकाश, चैतन्य अर्थात् विवके और बुद्धि, प्राणशक्ति सब कुछ परमात्मा का दिया हुआ है। उसी ने जीवन दिया है वही ले लेता है। मनुष्य का जीवन और जीवन का समस्त वैभव तथा मृत्यु सब परमात्मा के वश में है, फिर किसी मनुष्य का क्या भय मानना? जो दूसरों को दण्ड देने और मृत्युदण्ड देने की बात करता है वह मनुष्य मूर्ख है, दंभी है और विवेकहीन है। जो वस्तु अर्थात् जीवन वह किसी को दे नहीं सकता, उसे लेने की बात उसका घमंड ही है। मैं तो फल–मूल खाता हूँ जो धरती देती है, अंजलि से पानी पीता हूँ जो नदी देती है और धरती की ही घास–तिनकों की शय्या (बिस्तर) पर सो जाता हूँ। इसलिए मुझे किसी का कोई डर नहीं है और न ही किसी को मुझसे डरना चाहिए। यदि तुम मुझे जबरदस्ती उठाकर ले जाना चाहते हो तो केवल शरीर को ही ले जा सकोगे, मन को नहीं। मेरी स्वतंत्र आत्मा पर किसी और का अधिकार नहीं हो सकता, तुम्हारे देवपुत्र सिकंदर का भी नहीं। मुझसे कोई बलपूर्वक कुछ नहीं करवा सकता। पंचभूतात्मक नश्वर शरीर के स्थान पर शाश्वत आत्मरूप को स्वीकार करने वाले 'दर्शन' का दर्शन दाण्ड्यायन की इन पंक्तियों में किया जा सकता है।

8. चाणक्य : उसकी चिन्ता नहीं। पौधे अंधकार में बढ़ते हैं, और मेरी नीति–लता भी उसी भाँति विपत्ति–तम में

लहलही होगी। हाँ, केवल शौर्य से काम नहीं चलेगा। एक बात समझ लो, चाणक्य सिद्धि देखता है, साधन चाहे कैसे ही हों। बोलो तुम लोग प्रस्तुत हो?

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** झेलम नदी के तट के पास जंगल में चाणक्य, चंद्रगुप्त और अलका बातें कर रहे हैं, तभी वहाँ सिंहरण और गांधार राज पहुँच जाते हैं। सिंहरण कहता है (चाणक्य से) कि विपत्ति के बादल मंडरा रहे हैं, आप कुछ आज्ञा दें। तब चाणक्य ने उपरोक्त पंक्तियाँ कही।

**व्याख्या :** चाणक्य कहता है विपत्तियों की चिंता मत करो। इन विपत्तियों से ही हमें साहस और उत्साह मिलेगा और हम निरंतर विजय–मार्ग पर आगे बढ़ते जायेंगे। पौधे अंधकार में बढ़ते हैं अर्थात् दिन भर सूर्य की तपन से ऊर्जा इकट्ठी करते हैं और रात में उसी ऊर्जा के सहारे अपना विकास करते हैं। अंधेरा उनके विकास को रोक नहीं पाता जबकि पौधे तो जड़ हैं। उनके पास विवेक और चेतना का अभाव है। फिर हम तो विवेकवान चैतन्य मनुष्य है।, हम भी इन विपत्तियों के अंधेरों में से आगे बढ़ने का मार्ग निकालेंगे। मेरी नीति–लता भी पौधों की तरह विपत्ति के अंधकार में लहलहाएगी अर्थात् इस प्रतिकूल परिस्थिति में ही मैं चाणक्य अपनी नीतियों को नया रंग–रूप देकर उन्हें समृद्ध–विकसित और परिस्थितियों को अनुकूल बनाने योग्य बनाऊंगा। हाँ, यह अवश्य है कि केवल शौर्य से अर्थात् बल और बहादुरी से ही काम नहीं चलेगा, थोड़ी कुटिलता अवश्य करनी होगी। चाल चलनी होगी। यही मेरी नीति है। चाणक्य केवल सिद्धि अर्थात् सफलता देखता है। सफल होने के लिए चाहे जो भी साधन प्रयोग करना पड़े, करता है। साम, दाम, दण्ड, भेद कोई भी नीति प्रयोग करनी पड़े, विजय प्राप्त करें यही हमारा लक्ष्य है। बोलो, क्या आप लोग इसके लिए तैयार हो? कहने का अभिप्राय है कि सत् लक्ष्य की प्राप्ति के लिए असत् लोगों से जब जूझना हो तब असत् साधना भी अपनाने में दोष नहीं है। महाभारत युद्ध में यदि श्रीकृष्ण द्वारा इस नीति को न अपनाया गया होता तब दुर्योधन जैसे अनैतिक व्यक्ति को पराजित करना संभव नहीं था।

9. मालविका : (प्रवेश करके) फूल हंसते हुए आते हैं, फिर मकरंद गिरा कर मुरझा जाते हैं, आँसू से धरणी को भिगो कर चले जाते हैं। एक स्निग्ध समीर का झोंका आता है, निश्वास फेंक कर चला जाता है। क्या पृथ्वी तल रोने ही के लिए है? नहीं सबके लिए एक ही नियत तो नहीं। कोई रोने के लिए है तो कोई हंसने के लिए।

**संदर्भ :** पूर्ववत।

**प्रसंग :** मालव में सिंहरण के उद्यान में टहलते हुए, मालविका फूलों के जीवन और मनुष्यों के जीवन पर दार्शनिकता–पूर्ण दृष्टि से विचार करती है।

**व्याख्या :** सिंहरण के उद्यान में टहलती हुई मालविका ने खिले हुए सुंदर फूलों को देखा और फिर मुरझा कर धरती पर गिरे फूलों को भी देखा तो वह सोचती है कि इनका और मनुष्य का जीवन मिलता–जुलता है। फूल खिलते हैं तो लगता है जैसे हंस रहे हों, अपनी हंसी, सौंदर्य, सुगंध और पराग की समृद्धि लेकर सुखी–समृद्ध मनुष्य की तरह ही भरपूर हँसी हँस रहे हैं। फिर ये अपना पराग मनुष्यों, पक्षियों (भौरों आदि) आदि पर लुटाकर सर्वस्व दान कर मुरझा जाते हैं और ओस कणों के रूप में प्रकृति के आंसुओं को समेटे हुए धरती पर गिर जाते हैं। जहाँ ये गिरते हैं इनके आँसुओं को समेटे हुए धरती नम हो जाती है। वियोग का दुख संसार की नश्वरता को प्रकट कर शांत हो जाता है। ठंडी, सुगंधित हवा का एक झोंका आता है और इन गिरे हुए फूलों को उड़ाकर कुछ दूर ले जाता है, जैसे हवा इन फूलों के दुख पर ठंडी साँस भर रही हो। वह सोचती है क्या धरती सिर्फ रोने के लिए है? नहीं,

क्योंकि यह नियम सभी पर लागू नहीं होता। कुछ फूल टूट कर गिरते हैं और वहीं दूसरे ढेर सारे फूल खिल जाते हैं। एक मनुष्य जाता है तो संसार में दूसरा जन्म ले लेता है। यहाँ कोई हंसता है तो कोई रोता है। कोई जीता है, कोई मरता है, कोई जाता है, कोई आता है। सृष्टि का चक्र निरंतर चलता रहता है।

**10. कार्नेलिया** : सिंकदर ने भारत से युद्ध किया है और मैंने भारत का अध्ययन किया है। मैं देखती हूँ कि यह युद्ध ग्रीक और भारतीयों के अस्त्र का ही नहीं, इसमें दो बुद्धियाँ भी लड़ रही हैं। यह अरस्तू और चाणक्य की चोट है, सिकन्दर और चन्द्रगुप्त उनके अस्त्र हैं।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : रावी तट के उत्सव शिविर में कार्नेलिया, चन्द्रगुप्त, फिलिप्स आदि के मध्य बातें होती हैं। सिल्यूकस हार जाता है और विजेता चंद्रगुप्त से अपनी बेटी कार्नेलिया का विवाह करना चाहता है। कार्नेलिया भारत से प्रेम करने लगती है और इस देश का गहन अध्ययन करती है। वह चंद्रगुप्त से उल्लिखित पंक्तियाँ कहती हैं।

**व्याख्या** : कार्नेलिया कहती है कि मैं भारत को सिकंदर से अधिक जानती–पहचानती हूँ। क्योंकि सिकंदर ने भारत से युद्ध किया है। जबकि मैंने भारत का अध्ययन किया है। युद्ध करने वाला केवल जीतने का इच्छुक होता है, वह जिस देश को, स्थान को जीतना चाहता है उसे लगाव रहित होकर निशाना बनाता है। तोड़ता–लूटता और छीनता है। वह नहीं जानता यह जीत भौतिक है जबकि संस्कृति आत्मा के भीतर बसती है। वह जुड़ने, पढ़ने, देखने और आसक्ति से पता चलती है। मैं भारतीय संस्कृति को जान सकी हूँ, क्योंकि इसके इतिहास और वर्तमान से मैं प्रभावित हूँ। यह युद्ध भारत और ग्रीक के बीच केवल अस्त्रों का युद्ध नहीं था बल्कि दो बुद्धियों का युद्ध था। ये बुद्धिया अरस्तू और चाणक्य की हैं। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को और सिकन्दर ने अरस्तू के सिद्धांतों का अस्त्र धारण किया। चाणक्य कहता है तामस त्याग से सात्विक ग्रहण उत्तम है। इस सात्विक ग्रहण से तामस–त्याग बिना प्रयत्न के ही हो जाता है। अतः चाणक्य की कुटिल नीति चंद्रगुप्त को विजेता बनाती है।

12. चाणक्य यह नहीं मानता कि कुछ असम्भव है। तुम राक्षस से प्रेम करके सुखी हो सकती हो, क्रमशः उस प्रेम का सच्चा विकास हो सकता है और मैं अभ्यास करके तुमसे उदासीन हो सकता हूँ, यही मेरे लिए अच्छा होगा। मानव हृदय में यह भाव–सृष्टि तो हुआ ही करती है। यही हृदय का रहस्य है। तब, हम लोग जिस सृष्टि में स्वतंत्र हों, उसें परवशता क्यों मानें? मैं क्रूर हूँ, केवल वर्तमान के लिए, भविष्य के सुख शांति के लिये, परिणाम के लिए नहीं। श्रेय के लिए, मनुष्य को सब त्याग करना चाहिए, सुवासिनी! जाओ।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : चाणक्य से उसकी प्रिया सुवासिनी मिलती है। वह उसके साथ जीवन बिताना चाहती है लेकिन चाणक्य कहता है कि तुम राक्षस से विवाह करो इसी में हम दोनों का, मगध का कल्याण होगा। क्योंकि तुम्हारा मुझसे प्रेम बचपन का खेल था। तुमने राक्षस से ही प्रेम की परिभाषा सीखी है।

**व्याख्या** : चाणक्य सुवासिनी से कहता है कि तुम मुझे नहीं भूल सकती यह कहना गलत है, मैं कुछ भी असंभव नहीं मानता। तुम प्रयत्न करो, धीरे–धीरे सब कुछ सामान्य हो जाएगा। तुम राक्षस से प्रेम करके सुख का अनुभव करने लगोगी और धीरे–धीरे वह प्रेम बढ़ता ही जाएगा और मैं भी प्रयत्न करके तुमको भूलकर तुमसे विरक्त हो सकता हूँ। यही मेरे लिए ठीक होगा। मनुष्य के हृदय में भावनाओं की सृष्टि और परिवर्तित होना तो चलता ही रहता है। भावनाएँ आपना रूप और लक्ष्य बदलती रहती हैं यही तो हृदय का रहस्य है जिसे हृदय के अतिरिक्त कोई नहीं जान पाता। फिर इस संसार में हम स्वतंत्र रहना चाहते हैं तो मन के हाथों परतंत्र क्यों बनें? भावनाओं के बंदी क्यों बनें? हमें भावनाओं को वर्तमान और भविष्य के अनुकूल बनाना होगा। अभी मेरी बातें तुम्हें क्रूरतापूर्ण लग रही होंगी लेकिन मैं भविष्य की सुख–शांति के लिए यह सब कह रहा हूँ। अभी भावुक होकर तुम मेरे यौवन के प्रेम में बंध भी

जाओ तो तुम्हारा परिपक्व अवस्था में राक्षस से हुआ प्रेम तुम्हें सुखी नहीं रहने देगा। इसलिए जाओ, राक्षस से विवाह करके सुखी रहो।

यहाँ द्रष्टव्य है कि अपने प्रतिद्वंद्वी राक्षस के प्रति भी चाणक्य अपनी भावनाओं के अधीन न होकर यथार्थ कल्याण परक दृष्टि रखता है। उसकी क्रूरता वर्तमान की दुर्दशाओं के प्रति उनके विनाश के लिए है इसीलिए वह एक मगध के भावी कल्याण के लिए वह अपने आकर्षण व स्वार्थ से ऊपर उठता है।

### 9.3.2 पद्य

1. अरुण यह मधुमय देश हमारा।

   जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।

   सरस तामरस गर्भ विभा परनाच रही तरुशिखा मनोहर।

   छिटका जीवन हरियाली परमंगल कुंकुम सारा,

   लघु सुरधनु से पंख पसारे शीतल मलय समीर सहारे,

   उड़ते खग जिस ओर मुंह किये समझ नीड़ निज प्यारा।

   बरसाती आंखों के बादल बनते जहाँ भरे करुणा जल।

   लहरें टकराती अनन्त की पाकर जहाँ किनारा।

   हेम कुम्भ से उषा सबेरे भरती दुलकाती सुख मेरे।

   मदिर ऊंघते रहते जब जग कर रजनीभर तारा।

**संदर्भ :** ये पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद के नाटक चंद्रगुप्त से ली गई हैं।

**प्रसंग :** उद्भाण्ड में सिन्धु नदी के किनारे ग्रीक शिविर के पास वृक्ष के नीचे बैठी हुई कार्नेलिया भारत के प्राकृतिक सौन्दर्य से अभिभूत होकर यह गीत गाती है।

**व्याख्या :** प्रसाद जी कहते हैं हमारा देश भारत मधुमय है। मधु से तात्पर्य शहद जैसी मिठास, स्निग्धता और अमृत है। हमारे देश में परम्पराओं की, संबंधों की मिठास है। हमारी संस्कृति अमर है। भोर के समय उदित होते हुए बाल रवि को अरुण कहते हैं वह लाल रंग का होता है, विकासशील होता है। धीरे–धीरे वह बाल अरुण बड़ा और सुनहरा होता जाता है और प्रखर सूर्य में, सोने के गोले में बदल जाता है। सारी धरती इसके प्रकाश से आच्छादित हो जाती है। यह धरती को ऊष्मा, उर्वरता और जीवन शक्ति प्रदान करता है। सूर्य के इन्हीं गुणों की तुलना प्रसाद जी नव स्वतंत्र भारत से करते हैं कि यह अभी–अभी पराधीनता के अंधकार से निकला बाल अरुण है। यह सुंदर, कोमल, विकासशील है। धीरे–धीरे यह भौतिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, सामाजिक विकास करेगा और संसार पर सूर्य की तरह राज्य करेगा। हमारे देश में अनजान लोगों को भी आश्रय देने की सामर्थ्य है। यह सबको अपनाता है। भारत के सौंदर्य का वर्णन करते हुए प्रसाद जी कहते हैं कि तालाबों में रस से भरे कमल खिले हैं। उन कमलों का मध्य भाग (गर्भ क्षेत्र) पराग से भरा और सुंदर, सुगंधित है। तालाब के किनारे खड़े पेड़ों की छाया इन कमलों के मध्य में पड़कर अद्भुत सौंदर्य की सृष्टि कर रही है। इन कमलों का गुलाबी रंग और पेड़ों की हरियाली देखकर ऐसा लगता है जैसे हरे–भरे जीवन पर किसी ने मंगल सूचक कुंकुम छिड़क दिया हो। शीतल चंदन सी सुगंधित हवा बह रही है। मोर अपने पंख पसारे नृत्य कर रहे हैं। पक्षी हरियाली के मध्य अपने घोंसलों की ओर मुंह किए उड़ रहे हैं अर्थात् ये पेड़–पौधे, प्रकृति मनुष्य को ही नहीं पक्षियों को भी सुंदर आश्रय प्रदान करती है। भारत की

संस्कृति में एकता, समन्वय, त्याग, बलिदान, करुणा, प्रेम की भावना है। यहाँ बादलों से बरसने वाला जल भी ऐसा लगता है जैसे धरती के प्राणियों की आवश्यकता को समझ कर बादल रूपी आंखें करुणा–रूपी जल बरसा रही हैं। यहाँ सागर की लहरें किनारों से टकरा कर लौटती हैं और मर्यादा का ध्यान रखती हैं। सागर जैसी सर्वशक्तिमान अथाह जल राशि भी मर्यादा भंग नहीं करती फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है? सूर्योदय के समय का दृश्य इतना मनोरम लगता है कि जैसे उषा (भोर), हेमकुंभ (सोने का घड़ा) लेकर सुख रूपी प्रकाश भरकर ला रही है और धरती पर फैला रही है ताकि मनुष्य–पशु–पक्षी, समस्त चराचर सुखी हों। रात में जब तारे आसमान में जागकर धरती की रखवाली करते प्रतीत होते हैं तब लगता है जैसे वे मदमस्त हैं, ऊंघ रहे हैं, नींद में डूबना चाहते हैं लेकिन रात के अंधकार में अपना उत्तरदायित्व समझकर जाग कर सृष्टि की रखवाली कर रहे हैं।

उल्लिखित पंक्तियाँ भारत के प्रति कवि के गहन प्रेम को दर्शाती हैं। इस प्रेम के वशीभूत होकर कवि ने भारत के प्राकृतिक सौंदर्य को जीवंत बना दिया है।

2. प्रथम यौवन–मदिरा से मत्त, प्रेम करने की थी परवाह,
और किसको देना हृदय, चीन्हने की न तनिक थी चाह।
बेच डाला था हृदय, अमोल, आज वह मांग रहा था दाम,
वेदना मिली तुला पर तोल, उसे लोभी ने ली बेकाम।
उड़ रही है हृत्पथ में धूल, आ रहे हो तुम बे–परवाह।
करूं क्या दृग–जल से छिड़काव, बनाऊं मैं यह बिछलन राह।
सम्हलते धीरे–धीरे चलो, इसी मिस तुमको लगे विलम्ब,
सफल हो जीवन की सब साथ, मिले आशा को कुछ अवलम्ब।
विश्व की सुषमाओं का स्रोत, बह चलेगा आंखों की राह,
और दुर्लभ होगी पहचान, रूप–रत्नाकर भरा अथाह।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : घायल अलका अपने प्रेमी सिंहरण के पास बंदीगृह में कैद है। दोनों बातें करते हैं। अलका कहती है यदि मैं पर्वतेश्वर से विवाह कर लूँ तो वह तुम्हें मुक्त कर देगा फिर तुम बाहर जाकर देश की आजादी के लिए लड़ना। सिंहरण व्यथित हो जाता है तब अलका गाती है।

**व्याख्या** : अलका गीत के माध्यम से कहती है कि युवावस्था में मनुष्य की विचित्र दशा होती है। उसका हृदय यौवन के नशे में चूर होता है। जैसे कोई शराबी, शराब पीकर मस्त हो जाता है उसे अच्छे–बुरे की सुध–बुध नहीं रहती। उसी तरह मानव युवावस्था में निश्चिंत, अपने में ही डूबा हुआ रहता है उसे किसी की परवाह, चिंता नहीं रहती। वह प्रेम करना चाहता है, किसी को हृदय देना और बदले में किसी का हृदय लेना चाहता है। लेकिन किसे हृदय देना है या देना चाहिए, जानने–पहचानने की इच्छा उसमें नहीं रहती। यही मेरे साथ हुआ। अलका कहती है कि मैंने बिना सोचे–समझे अपने अनमोल हृदय को बिना दाम के ही बेच दिया लेकिन जिसे हृदय दिया आज वह मुझसे दाम (कीमत) मांग रहा है। कीमत देने के लिए जब हृदय को तोला तो अपार वेदना मिली, उस लोभी प्रिय ने इस वेदना को बिना काम की होने पर भी ले लिया। अब मेरे हृदय के उन रास्तों पर, जहाँ तुम निश्चिंत होकर आ रहे हो, घूम रहे हो, धूल उड़ रही है। यह धूल वियोग की, दुख की है। क्या करूं यह धूल तुम्हें कष्ट न दे इसलिए चाहती हूँ कि आंसुओं का जल छिड़क कर इस धूल भरी राह को फिसलन भरी राह बना दूँ अर्थात् मैं पर्वतेश्वर से

विवाह करूं। वह देशद्रोही है लेकिन मुझ से विवाह कर वह तुम्हें छोड़ देगा तुम मुझसे दूर हो जाओगे। मुझ तक वापस पहुँचने के लए तुम सतर्क होकर, संभल–संभल कर इन कठिन रास्तों पर चलते हुए देशद्रोहियों को मारना और देश को आजाद कराते हुए मुझ तक पहुंच जाना। तुम इन फिसलन भरे रास्तों पर धीरे–धीरे सम्हलकर चलना। मुझ तक आने में देर लगेगी अर्थात् देश को द्रोहियों से मुक्त कराने में देर लगेगी लेकिन कार्य सिद्ध होगा। देश आजाद होगा, तो आशाओं को आधार मिलेगा, जीवन सफल होगा तब हम एक–दूसरे से मिलेंगे। हमारी आंखें एक–दूसरे को देखेंगी। इस समय आंखें में आंसू भरे होंगे जो वियोग के बाद मिलन की प्रसन्नता को दोगुना कर देंगे। आंसू भरी आंखें सुन्दरता के समुद्र की तरह लगेंगी। उनसे बहते हुए आसुओं की धाराए विश्व की सारी सुन्दरता को अपने में समेटे हुए होंगी। आंसुओं से भरी आंखों से जो हम एक–दूसरे को देखेंगे वह पहचान दुर्लभ होगी, पवित्र होगी, विजेता की होगी। देशभक्त और धरती–पुत्र के आत्मसम्मान की होगी।

3. बिखरी किरन अलक व्याकुल हो विरस वदन पर चिंता लेख

   छायापथ में राह देखती गिनती प्रणय–अवधि की रेख।

   प्रियतम के आगमन–पथ में उड़ न रही है कोमल धूल,

   कादम्बिनी उठी यह ढंकने वाली दूर जलधि के कूल।

   समय–विहग के कृष्णपक्ष में रजत चित्र–सी अंकित कौन

   तुम हो तुम्हरि तरल तारिके! बेलो कुछ, बैठो मत मौन?

   मन्दाकिनी समीप भरी फिर प्यासी आंखें क्यों नादान।

   रूप–निशा की ऊषा में फिर कौन सुनेगा तेरा गान।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : अलका पर्वतेश्वर के महल में है। तारों से भरा नीला आकाश और कृष्ण पक्ष की काली रात्रि में वह सिंहरण को याद करती है उसे लगता है काली रात अपनी चोटी में तारों के फूल टांक रही है। प्रकृति सौंदर्य और प्रिय की स्मृति में वह अपनी मनोव्यथा को गीत का रूप दे देती है।

**व्याख्या** : अलका गाती है आसमान में चांद की अनुपस्थिति (कृष्ण पक्ष होने के कारण) में वियोगिनी किरणें ऐसी बिखरी हुई हैं जैसे प्रिय के वियोग से व्याकुल युवती के चेहरे पर पलकें बिखर जाती हैं। वियोग की आग में जलकर देह से सारा जीवन और सौंदर्य का रस सूख गया है, देह विरस दिखाई देती है तथा उस पर चिंता की रेखाएं भी उभर आती हैं। वह वियोगिनी इस रात्रि के अंधकार में तारों की छाया में ही प्रिय की राह देखती है और मिलन की अवधि का लेखा–जोखा करती रहती है। जिस राह से प्रिय को आना है उस पर प्रतीज्ञा में डूबी सांसों की कोमल धूल उड़ रही है लेकिन धूल को ढंकने के लिए आंसुओं की धाराएं इस तरह उमड़ रही हैं जैसे किसी सागर की लहरें उसके किनारों को ढंकने के लिए उमड़ी चली जाती है। प्रिया तारों को संबोधित करते हुए कहती है कि समय पक्षी की तरह उड़कर जा रहा है। कृष्ण पक्ष की इस काली रात्रि में चांदी की तरह श्वेत चित्र सी अंकित तुम कौन हो तारिके? तुम सुन्दर, सरल ह्रदय की स्वामिनी हो, मेरा ह्रदय पहचानती हो इसलिए कुछ बोलो, चुप मत रहो बताओ मेरा प्रिय कब, किस राह से आकर मिलेगा मुझसे। वह स्वयं को संबोधित करते हुए कहती है कि पास ही जल से भरी मंदाकिनी नदी बह रही है फिर भी तेरी आंखें क्यों प्यासी हैं। तू देशद्रोही (पर्वतेश्वर) के अधीन है अर्थात् यह तेरे रूप यौवन की रात्रि का उदय है। अर्थात् प्रिय से मिलकर ही रूप–यौवन और जीवन सार्थक हो पाता, लेकिन पराए–दुष्ट व्यक्ति के अधीन होने से यह रूप–यौवन भी रात्रि की तरह कालिमा युक्त हो

गया है। लेकिन तू इसी तरह उदास निराश रही और धैर्य खो बैठी तो जब तेरा प्रिय देश को स्वतंत्र कराकर तुझे लेने, तुझसे मिलने आएगा, रूप–यौवन की निशा, उषा यानि भोर में परिवर्तित हो जाएगी तब अपने प्रेम–गीत किस–तरस सुना पाएगी, कौन सुनेगा? यहाँ अलका अपने आपको सांत्वना देती हुई पर्वतेश्वर के अधीन रहकर सिंहरण की प्रतीक्षा करती है।

**5. मधुप कब एक कली का है।**

पाया जिसमें प्रेम रस सौरभ और सुहाग,
बेसुध हो उस कली से मिलता भर अनुराग,
बिहारी कुंजगली का है!
कुसुम धूल से धूसरित चलता है उस राह,
कांटों में उलझा तदपि रही लगन की चाह,
बावला रंगरली का है।
हो मल्लिका, सरोजनी या यूथी का पुंज
अलि को केवल चाहिये सुखमय क्रीड़–कुंज,
मधुप कब एक कली का है!

**संदर्भ** : उपरोक्त।

**प्रसंग** : चंद्रगुप्त अपने प्रकोष्ठ में है। वहाँ मालविका जो उसकी मित्र और प्रिया है, आती है। उसने अपनी गूंथी हुई माला चंद्रगुप्त को पहना दी। तब चंद्रगुप्त ने कहा इन फूलों का रस तो भौरे ले चुके हैं। मालविका कहती है निरीह फूलों पर दोष मत लगाइए सम्राट। उनका काम है सुगंध बिखेरना। यह उनका मुक्तदान है। इस दान को भौरे लें या हवा, उन्हें मतलब नहीं होता। चंद्रगुप्त उससे कुछ गाने के लिए कहता है। वह गाती है।

**व्याख्या :** भौरे और पुरुष की चचंल प्रकृति पर संकेत करती हुई मालविका गाती है कि भौंरा कब किसी एक कली का होकर रहा है। वह तो चंचल चित्त वाला है कभी इस कली पर, कभी उस कली पर मंडराता है। जिस कली में उसे सुंदर रंग, सुगंध और रस मिल जाए उसी के प्रेम में बेसुध होकर उससे मिलता है। वह तो कुंजगली का बिहारी है यानि नटखट कृष्ण जैसा फूलों की गली में घूमते रहने वाला है। पराग से लिपटा हुआ, कांटों से उलझता रहता है लेकिन फूलों की लगन नहीं छोड़ता। वह तो प्रेम रूपी रंग में रंगा हुआ बावला है। मल्लिका, सरोजनी या यूथी किसी भी फूल का बगीचा हो भौरे को तो केवल ऐसे बाग से मतलब होता है जहाँ वह सुख से प्रेम–क्रीड़ कर सके। पराग का पान कर सके। वह रस पीता है, सुगंध से मदमस्त होता है और दूसरी सुंदर कली की ओर चला जाता है। वह स्वार्थी है। किसी एक कली से बंधकर नहीं रहता।

6 हिमाद्रि तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला
स्वतन्त्रता पुकारती
अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो,

प्रशस्त पुष्प पंथ है बढ़े चलो बढ़े चलो।

असंख्य कीतिरश्मियां,

विकीर्ण दिव्यदाह–सी।

सपूत मातृभूमि के

रूको न शूर साहसी!

अराति सैन्य सिंधु में सुवाइवाग्नि से जलो,

प्रवीर हो जयी बनो बढ़े चलो बढ़े चलो।

**संदर्भ** : पूर्ववत।

**प्रसंग** : यवनों के आक्रमण से भारत को बचाने के लिए अलका यह गीत गाती हुई और आर्य पताका फहराती हुई नागरिकों का उत्साह वर्धन करती है कि वे आएं और भारत को शत्रुओं से बचाने के लिए युद्ध में सम्मिलित हो जाएं।

**व्याख्या :** अलका कहती है –हे भारतीय नागरिकों हिमालय की ऊंची चोटी से स्वतंत्रता तुम्हें पुकार रही है। तुम प्रबुद्ध हो और बुद्धिमान और विवेकवान हो, तुम्हारा हृदय शुद्ध है उसमें छल–कपट देशद्रोह की गंदगी नहीं है तो इस स्वतंत्रता की पुकार को सुनो। यह स्वतंत्रता स्वयंप्रभा है। यानि अपने ही प्रकाश से प्रकाशित है। इसे पाकर मनुष्य अपने जीवन का निर्माण अपने ही परिश्रम से आत्मसम्मान के साथ कर सकता है। यह समुज्ज्वला है। अर्थात् यह उज्ज्वलता का समूह है, पवित्र है। इसे प्राप्त करके जीवन धन्य हो जाएगा। अतः हे भारतीयो तुम दृढ़ प्रतिज्ञा करके आगे बढ़ो, तुम उन अमर वीरों के पुत्र हो जिनका यश अब तक उज्ज्वल और प्रकाशित है, अपने पूर्वजों के नाम को कलंकित मत करो। स्वतंत्रता प्राप्ति का मार्ग पुण्य मार्ग है यह हमारे सामने फैला है, बढ़ो और बढ़कर शत्रुओं को हराकर स्वतंत्रता प्राप्त कर लो।

हे भारतीयो, तुम्हारे देशभक्त पूर्वजों ने देश के लिए जीवन का उत्सर्ग किया था। उनकी कीर्ति असंख्य किरणों के रूप में फैलकर सूर्य के प्रकाश की तरह आलोक और ऊष्मा प्रदार कर रही है। उन दिव्य आत्माओं के दान को स्मरण करो। तुम मातृभूमि के सपूत हो। शूर, वीर और साहसी हो, रुको मत। आगे बढ़ो। शत्रुओं के सैनिकों का सागर सामने लहरा रहा है अर्थात् असंख्य सैनिक शत्रु खड़े हैं। उनके बीच जाकर उन्हें समाप्त कर दो ठीक वैसे ही जैसे समुद्र में एकत्र हुए कचड़े को बड़वाग्नि यानि समुद्र की आग जला देती है, सफाई कर देती है। उसी प्रकार शत्रुओं के सागर में वाड़वाग्नि बन कर जलो। तुम सदैव से वीर रहे हो, फिर वीरता दिखाओ, विजेता बनो, आगे बढ़ो।

### 1.4 चरित्र–चित्रण

पात्र बहुल नाटक होने पर भी चन्द्रगुप्त का चरित्र–चित्रण अपने आप में अप्रतिम है। देश और काल की व्यापक पीठिका पर मगध, गान्धार और मालव की घटनाओं के संदर्भ में प्रत्येक पात्र के चरित्र की सूक्ष्मातिसूक्ष्म रेखाओं का अंकन करना प्रसाद की अपूर्व क्षमता का प्रतिपादक है। राष्ट्रीयता का उदात्त आदर्श प्रस्तुत करने के उद्देश्य से नाटककार ने बहुत से पात्रों की योजना की है, फिर भी उन चरित्रों में व्यक्ति वैविध्य सर्वत्र देखने को मिल जाता है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने ठीक ही कहा है 'अपने कर्त्तव्य का निर्वाह, देशभक्ति और प्रणय की मर्यादा की रक्षा सभी पात्रों ने समग्र कथानक में आद्योपान्त किया है। इसमें राष्ट्र–प्रेम और बलिदान का स्वरूप ही उभर कर आता है। किसी भी अच्छे नाटक के लिए यह दोष ही है कि नायिका की स्थिति सुव्यवस्थित न होने पाए, नाटक के

पूरे प्रवाह में प्रमुख पात्रों का संस्थान होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता तो किसी पात्र की सापेक्षित प्रमुखता में सन्देह हो जाता है।

### 1.4.1 चन्द्रगुप्त

चन्द्रगुप्त प्रस्तुत नाटक का नायक है। यद्यपि वह चाणक्य द्वारा निर्मित और विकसित किया गया है फिर भी चाणक्य उसका निर्माता होकर नियामक नहीं, सहायक है। चन्द्रगुप्त क्षात्र तेज से सम्वलित, स्वावलम्बी और आत्मसम्मान से युक्त है। 'मुद्राराक्षस' के चन्द्रगुप्त की भांति वह परावलम्बी नहीं है। चाणक्य के नाराज होकर चले जाने, और कन्धे–से–कन्धा भिड़ा कर खड़े होने वाले मित्र सिंहरण के चले जाने पर भी वह वीर–दर्प से युद्ध का सामना करने को सन्नद्ध हो जाता है 'सिंहरण इस प्रतीक्षा में है कि कोई बलाधिकृत जाये तो वे अपना अधिकार सौंप दें। नायक! तुम खड्ग पकड़ सकते हो और उसे हाथ में लिए हुए सत्य से विचलित तो नहीं हो सकते? बोलो! चन्द्रगुप्त के नाम से प्राण दे सकते हो? मैंने प्राण देने वाले वीरों को देखा है। चन्द्रगुप्त भी प्राण देना जानता है, युद्ध करना जानता है, और विश्वास रखो, उसके नाम का जयघोष विजयलक्ष्मी का मंगल–गान है। आज से मैं ही बलाधिकृत हूँ। मैं आज सम्राट नहीं, सैनिक हूँ। चिन्ता क्या, सिंहरण और गुरुदेव न साथ दें, डर क्या सैनिकों! सुन लो! आज से मैं केवल सेनापति हूँ, सम्राट नहीं। जाओ, यह तो मुद्रा और सिंहरण को छुट्टी दो। कह देना कि चन्द्रगुप्त ने कहा है कि तुम दूर खड़े होकर देख लो सिंहरण! मैं कायर नहीं हूँ। जाओ।''

इस कथन में चन्द्रगुप्त का क्षात्रतेज, स्वावलम्बी और आत्म–विश्वासी व्यक्तित्त्व झलकता है। जिस समय आर्यावर्त विदेशियों के आक्रमणों से सन्त्रस्त और विमर्दित हो रहा था तथा आन्तरिक विद्रोह और अव्यवस्थओं से जर्जर हो रहा था, उस समय चाणक्य की प्रेरणा से चन्द्रगुप्त ने जो साहस और पराक्रम दिखाया उससे उसकी देश–भक्ति, निष्ठा और कर्त्तव्य–परायणता का बोध होता है। देश के साथ विश्वासघात करके वह सत्ता नहीं पाना चाहता, इसलिए सिकन्दर की अयाचित सहायता अस्वीकार कर देता है। विदेशियों की रणनीति से परिचित हो जाने के कारण भारतीय रण–नीति में वह परिवर्तन करता है। उसके जीवन का ध्येय है केन्द्र में शक्तिशाली आर्य–राष्ट्र की स्थापना तथा विदेशी यवनों को भारत की सीमा से बाहर खदेड़ना। वह सिंहरण से कहता है ''यवनों को यहाँ से हटाना है और उन्हें जिस प्रकार हो भारतीय सीमा के बाहर करना है। इसलिए शत्रु की नीति से ही युद्ध करना होगा।''

चन्द्रगुप्त के जीवन में कई प्रेमिकाएँ आती हैं। कल्याणी, मालविका और कार्नेलिया तीनों उससे प्रेम करती हैं। उनके प्रेम को प्रसाद ने गोपनीय नहीं रखा है। कल्याणी के मुख से हम सुनते हैं ''कल्याणी ने वरण किया था केवल एक पुरुष को वह था चन्द्रगुप्त।'' इसी प्रकार कार्नेलिया, सिल्यूकस से कहती है ''मुझे भारत की सीमा से दूर ले चलिए, नही ंतो मैं पागल हो जाऊंगी।'' मालविका सोचती है ''जाओ प्रियतम, सुखी जीवन बिताने के लिए और मैं रहती हूँ चिर दुखी जीवन का अन्त करने के लिए।'' चाणक्य की सर्वग्रासी छाया सुकुमार कल्याणी और मधुर मालविका को 'बलि' कर देती है। चन्द्रगुप्त इन कोमल कलिकाओं का प्रतिदान भी नहीं दे पाता। कार्नेलिया का प्रेम वैयक्तिक हो सकता है पर चाणक्य के लिए वह राजनीति का एक अंग है। लगता है कि चाणक्य की अनिच्छा के कारण ही कल्याणी और मालविका का परिणय चन्द्रगुप्त से न हो सका पर राजनीतिक कारणों से ही चाणक्य ने कार्नेलिया का विवाह चन्द्रगुप्त से करा दिया। या तो चन्द्रगुप्त कल्याणी और मालविका के प्रेम को समझ ही न सका था अथवा कूटनीतिक चातुरी के कारण चाणक्य ने उसे समझने ही नहीं दिया।

चन्द्रगुप्त के जीवन में उतार–चढ़ाव या असफलता नहीं है। वह जहाँ कहीं जिस किसी काम से गया, सफल होकर लौटा। इससे कभी–कभी उसके चरित्र में एकरसता–सी लगती है।

### 1.4.2 चाणक्य

चन्द्रगुप्त नाटक का सबसे तेजस्वी व्यक्तित्व चाणक्य है। वह इतिहास–प्रसिद्ध विद्वान तथा कूटनीतिज्ञ है। चाणक्य का चरित्र प्रसाद की सर्वोत्तम चारित्र्य–सृष्टि है। इतना सशक्त व्यक्तित्त्व, दृढ़ इच्छाशक्ति, अदम्य उत्साह तथा प्राणवत्ता अन्यत्र नहीं मिलती। डॉ0 जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने चाणक्य के व्यक्तित्त्व को शुद्ध ब्राह्मण शक्ति का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण या 'जातिगत मर्यादा का प्रबल समर्थक कह कर उनके व्यक्तित्त्व के व्यापक ओज और तेज को क्षीण सिद्ध करने का असफल प्रयत्न किया है।

निर्भीक, दृढ़–चरित्र तथा कष्ट–सहिष्णु चाणक्य आर्य–साम्राज्य का निर्माणकर्ता है। उसका ब्राह्मणत्व राष्ट्र की शुभ–चिंता में निहित है क्योंकि एक जीव की हत्या से डरने वाली संन्यासिनी बौद्ध संस्कृति देव की रक्षा नहीं कर सकती थी। चाणक्य का सारा प्रयत्न देश के कल्याण के लिए अनेक खण्ड राज्यों को मिटाकर एक लोकप्रिय किन्तु शक्तिशाली केन्द्रीय राज्य–सत्ता की स्थापना रहा है। वह 'ब्राह्मणत्व' का समर्थन वहाँ तक करता है, जहाँ तक वह उनके इस उद्देश्य का प्रतीक बने 'ब्राह्मण' न किसी के राज्य में रहता है और न किसी के अन्न से पलता है, स्वराज्य में विचरता है और अमृत होकर जीता है। ब्राह्मण सब कुछ सामर्थ्य रखने पर भी स्वेच्छा से इन माया–स्तूपों को ठुकरा देता है। प्रकृति के कल्याण के लिए अपने ज्ञान का दान देता है। इसलिए अपने प्रखर बुद्धिवाद और दूरदर्शिता द्वारा सिकन्दर जैसे आक्रामक के समक्ष, चाणक्य ने देश को एक सूत्र में आबद्ध किया और लोहा लिया। देश के गौरव को बढ़ाया। नन्द की सभा में उसका अपमान तो निमित्त मात्र है। जो लोग चाणक्य के सारे कार्य–कलापों का श्रेय अपमान की प्रतिक्रिया, क्रोधावेग और प्रतिहिन्सा को देते हैं, वे चाणक्य के चरित्र की सूक्ष्म मनोवृत्तियों को नहीं समझ पाते। चाणक्य की विपत्ति–तम में लहलहाने वाली 'नीति–लता' किसी प्रतिक्रिया से उद्भूत नहीं है, वह उसकी सहज मेधा का परिणाम है।

चाणक्य की समस्त योजनाएं पूरी होती हैं क्योंकि उसके विचार सुलझे हुए, मेधा अत्यन्त तीक्ष्ण और परिपक्व है। वह लक्ष्य देखता है, साधन नहीं। वह आत्यन्तिक रूप से आत्मविश्वासी और सतर्क है। वह लौह–स्तम्भ की भांति–अप्रणत और अनबूझ पहेली की भांति रहस्यमय है। वह विपक्षियों के लिए यमराज की तरह क्रूर और निर्दयी है। उसके 'शब्दकोष' में 'असम्भव' शब्द का अभाव है। समय पड़ने पर वह कुछ भी कर सकता है दया किसी से न मांगूंगा और अधिकार तथा अवसर मिलने पर किसी पर न करूंगा। क्या कभी नहीं? हाँ, हाँ कभी–किसी पर नहीं। मैं प्रलय के समान अबाध गति और कर्त्तव्य में इन्द्र के वज्र के समान भयानक बनूंगा। निरीह कल्याणी की आत्महत्या को देख कर यह कहना ''चन्द्रगुप्त, तुम आज निष्कण्टक हुए।'' कितनी निर्ममता और क्रूरता है। किन्तु वह जानता है कि 'महत्वाकांक्षा का मोती निष्ठुरता की सीपी में रहता है' यही कारण है कि कुसुम की तरह कोमल और संगीत की भांति मधुर, मालविका की बलि कर देने में वह नहीं हिचकिचाता। कर्त्तव्य के पालन में भावावेग को वह स्थान नहीं देता। चन्द्रगुप्त के संवेगों को भी वह चोट पहुँचाता रहता है। कठोर राजनीतिज्ञ होने के कारण वह जिस प्रखर प्रणाली को अपनाता है, उसमें अनेक पुष्प–कलिकाएँ नष्ट हो जाती हैं।

चाणक्य ने चाहे 'दया न करने' की प्रतिज्ञा की हो पर उसके निर्लिप्त, उदार और सहृदय व्यक्तित्व का परिचय कई अवसरों पर मिलता है। अवसर आने पर वह अपने बड़े–से–बड़े शत्रु एवं विद्रोही को पूर्ण सात्विकता और सदाशयता के साथ क्षमा करता है। राक्षस, सिकन्दर, सेल्यूकस और आम्भीक के उदाहरण प्रत्यक्ष हैं, यद्यपि क्षमा और उदारता भी उसकी नीति का एक अंग है। चाणक्य की क्रूरता वर्तमान के लिए है, भविष्य के लिए नहीं। वह अपने प्रबल प्रतिद्वन्द्वी राक्ष की कमजोरियों को, चन्द्रगुप्त की भावुकतापूर्ण प्रवृत्तियों को तथा कार्नेलिया की आन्तरिक इच्छा को अच्छी तरह समझता है और इन कोमल प्रवृत्तियों और रुचियों का प्रयोग अवसर आने पर करता है। उसके भी विजन–बालुका–सिन्धु में एक सुधा की लहर सुवासिनी दौड़ पड़ी थी किन्तु चन्द्रगुप्त को निष्कण्टक

करने के लिए उसका मुंह उसने राक्षस की ओर मोड़ दिया। इसे उसकी उदारता भी कह सकते हैं, कर्त्तव्य और परिस्थितियों की विवशता भी और दूरदर्शिता भी।

चाणक्य के व्यक्तित्व और चरित्र में ऐसा दिव्य–आलोक दिखाई पड़ता है, जिसके प्रखर तेज से चन्द्रगुप्त नाटक के अन्य सभी पात्रों की आंखें झिप जाती हैं। प्रसाद की इस अद्‌भुत चारित्र्य सृष्टि को पाठक भी देखते ही रह जाते हैं। उसकी कर्त्तव्य की कठोरता हमें प्रेरणा देती है तथा नवीन राष्ट्रीय कल्पना का आयाम खोलती है और भाग्यवाद के विपरीत कर्मवाद की ओर प्रेरित करती हैं। हम चाणक्य को आदर देते हैं, उसके व्यक्तित्व को श्रद्धा से नमन करते हैं, पर उससे 'सहानुभूति' नहीं व्यक्त कर सकते, तब भी नहीं जब कि सुवासिनी उसने यह कह कर विरत हो जाती है ''तुम संसार को अपने वश में करने का संकल्प रखते हो, फिर अपने को नहीं। देखो, दर्पण ले कर, तुम्हारी आंखों में यह तुम्हारा कौन–सा नवीन चित्र है।''

अन्त में यह कहना ठीक होगा कि चाणक्य प्रसाद के चारित्र्य सृष्टि की सर्वोत्तम प्रतिकृति है। यह आद्यन्त सच्चे ब्राह्मण की भांति मेघ के समान मुक्त वर्षा सा जीवन दान, सूर्य के समान अबाध आलोक विकीर्ण करना, सागर के समान कामना नदियों को पचाते हुए सीमा के बाहर न जाना करता रहा। चाणक्य का व्यक्तित्व राष्ट्रीय गौरव का केन्द्र बिन्दु प्रतीत होता है।

### 1.4.3 पर्वतेश्वर

इतिहास–प्रसिद्ध पौरव वीर सिकन्दर के छक्के छुड़ा देने वाला व्यक्तित्त्व है, भारत का इतिहास जिस पर आज भी गर्व करता है, चन्द्रगुप्त नाटक में वही 'पर्वतेश्वर' के रूप में राक्षस की ही भांति प्रसाद की सहानुभूति नहीं प्राप्त कर सका है। नाटक के प्रारम्भ में इतिहास–पुरुष पौरव की एक झलक पाते हैं। हाथियों के प्रत्यावर्तन से हतोत्साहित न होकर झेलम के युद्ध में वह ललकारता है ''उन कायरों को राको! उनसे कह दो कि आज रणभूमि में पर्वतेश्वर, पर्वत के समान अचल है। जय–पराजय की चिंता नहीं। इन्हें बतला देना होगा, कि भारतीय लड़ना जानते हैं। बादलों से पानी बरसने की जगह वज्र बरसें, सारी गज–सेना छिन्न–भिन्न हो जाये, रथी विरथ हों, रक्त के नाले धमनियों से बहें, परंतु एक पग भी पीछ हटना पर्वतेश्वर के लिए असम्भव है। धर्मयुद्ध में प्राण भिक्षा मांगने वाले हम भिखारी नहीं। जाओ, उन भगोड़ों से एक बार जननी के स्तन्य की लज्जा के नाम पर रूकने के लिए कहो। कहो, मरने का क्षण एक ही है।'' किन्तु इसके आगे पर्वतेश्वर का चरित्र पतित हो गया है। वह सिकन्दर से सन्धि करता है। भारतीयों के प्रतिकूल एक हजार अश्वारोही सिकन्दर की सहायता के लिए भेजता है। वह अलका पर आसक्त है किन्तु अलका उसे कायर समझती है ''यदि भूपालों का–सा व्यवहार न मांगकर आप सिकन्दर से द्वन्द्व–युद्ध मांगते तो अलका को विचार करने का अवसर मिलता।'' पराजित हो जाने के कारण उसका आत्म–बल भी क्षीण हो जाता है। जिस कल्याणी से विवाह के प्रस्ताव को दर्पपूर्ण ढंग से उसने ठुकरा दिया था, उसी कल्याणी से मद्यप–सी चेष्टा करता हुआ प्रणय की भिक्षा मांगता है और उससे छेड़–छाड़ करने के कारण हत्या हो जाती है। प्रसाद जी ने यहाँ ऐतिहासिक पौरव का पतन दिखलाया है।

### 1.4.4 राक्षस

चन्द्रगुप्त में इतिहास–प्रसिद्ध राक्षस का विकृत रूप ही चित्रित है। अमात्य वक्रनास के कुल में जन्मा राक्षस कला–कुशल, वीर, विद्वान तथा कूटनीतिज्ञ है किन्तु चन्द्रगुप्त नाटक में राक्षस सुवासिनी का प्रेमी, आत्मकेन्द्रित, स्वार्थी और विद्वेषी व्यक्ति के रूप में आता है। उसकी दृष्टि में 'मगध से अधिक महत्त्व सुवासिनी का है।'' जाता मगध, कटती प्रजा, लुटते नगर। मैं सुवासिनी के लिए मगध बचाना चाहता था।'' वह राष्ट्र की अपेक्षा वैयक्तिक कारणों को अधिक महत्त्व देता है। वह व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए सिल्यूकस से जा मिलता है। वह देश–द्रोह करने के लिए उन्मुख हो जाता है।

प्रसाद जी ने इस कमजोर, चरित्र–भ्रष्ट और बुद्धिहीन राक्षस को जाने क्यों चाणक्य की प्रतिद्वन्द्विता में खड़ा किया है। हर काम चाणक्य के इशारे पर करता है। इतना भोला है कि वह तनिक से बहकावे में अपनी 'मुद्रा' दे देता है। मगध में चाणक्य के कहने से सभी काम करता है, क्योंकि चाणक्य उसे सुवासिनी से मिला देने का वचन देता है। 'मुद्राराक्षस' नाटक का तेजस्वी राक्षस अपने स्वामी तथा मगध के लिए अविचल भक्ति रखने वाला राक्षस यहाँ कठिनाई से पहचाना जाता है। यह राक्षस तो आकण्ठ मदिरा में डूबा हुआ, सुवासिनी का एकान्त प्रेमी है मुद्राराक्षस का कूटनीतिज्ञ राक्षस नहीं। राक्षस को प्रसाद जी (नाटककार) की सहानुभूति नहीं प्राप्त हो सकी है।

### 1.4.5 अलका

अलका देश–सेवा और कर्त्तव्यनिष्ठा में डूबी हुई गान्धार देश की बालिका है। वह सक्रिय रूप से विदेशी आक्रमणकारियों को बाहर निकालने का प्रयास करती है। उसके व्यक्तित्त्व में विद्रोह है। ''यदि वह बन्दिनी नही बना कर रखी जायेगी तो सारे गान्धार में वह विद्रोह मचा देगी।'' उसे अपने देश से सच्चा प्रेम है। देश के भूगोल से प्रेम है, देश के इतिहास से प्रेम है। वह कहती है– ''मेरा देश है, मेरे पहाड़ हैं, मेरी नदियाँ हैं और मेरे जंगल हैं। इस भूमि में एक–एक परमाणु मेरे हैं और मेरे शरीर के एक–एक क्षुद्र अंश उन्हीं परमाणुओं के बने हैं।''

देशोद्धार के लिए वह हर कष्ट उठाने को तैयार है। विशिष्ट स्थान के मानचित्र के सिलसिले में जब वह न्यायाधिकरण में प्रस्तुत होती है, तब निर्भीकतापूर्ण कहती है– ''महाराज! मुझे दण्ड दीजिये, कारागार में भेजिए, नही तो मैं मुक्त होने पर भी यही करूंगी। कुल पुत्रों के रक्त से आर्यावर्त की भूमि सिंचेगी।... महाराज! आर्यावर्त के सब बच्चे आम्भीक जैसे नहीं होंगे। वे इसकी मान–प्रतिष्ठा और रक्षा के लिए तिल–तिल कट जायेंगे!..... तब बचे हुए क्षतांग वीर गान्धार को भारत के द्वार–रक्षक को विश्वासघाती के नाम से पुकारेंगे और उसमें नाम लिया जायेगा मेरे पिता का!''

आवश्यकता के अनुरूप वह स्वांग भी रचती है और तलवार भी उठाती है। घायलों की सेवा करती है। वह जंगल–कानन में घूमती है और तक्षशिला के निवासियों को जगाती हुई जगह–जगह भटकती है। देश–निष्ठा के कारण ही वीर सिंहरण का वह चरण करती है। इस तरह वह देश–सेविका चन्द्रगुप्त नाटक का विशिष्ट नारी–पात्र है। उसका सार्वजनिक जीवन, वैयक्तिक चरित्र को उजागर नहीं होने देता। प्रसाद ने अलका का चरित्र–चित्रण करते समय उसे भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में लगी हुई निःस्वार्थ सेविकाओं का स्वरूप प्रदान किया है।

### 1.4.6 सुवासिनी

शकटार की कन्या, मगध के उद्यान का सुकोमल कुसुम सुवासिनी का जीवन परिस्थितियों के झंझावातों में झुलसता रहा। राज्य–कोप के कारण पिता के भू–गर्भ में बन्दी हो जाने पर वह मगध–सम्राट के विलास–कानन की रानी बनती है फिर अभिनयशाला की नर्तकी बन जाती है। उसने जीविका के लिए सभी काम किये। कभी अभिनेत्री बनी, कभी नर्तकी बनी, कभी दासी बनी, पर उसने अपना स्त्रीत्व नहीं बेचा। वह राक्षस की अनुरक्ता है, उससे विवाह करना चाहती है। एक नहीं दो–दो बार उसके विवाह में अवरोध उत्पन्न हुआ।

सुवासिनी का चरित्र मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दुरूह बना दिया गया है। वह प्रेम करती है राक्षस से, पर गाती है नन्द के लिए। राक्षस की प्रणय–याचना पर वह पिता की आज्ञा के बिना विवाह नहीं करना चाहती। बाल्यकाल में वह चाणक्य से प्रेम करती थी। राक्षस के याद दिलाने पर वह कहती है ''मैं चाणक्य को इधर तो एक प्रकार से विस्मृत कर चुकी थी, तुम सोयी हुई इस भ्रान्ति को न जगाओ।'' किन्तु जब वही चाणक्य उसे बचपन की याद दिलाता है, तब वह कहती है–''यह क्या विष्णुगुप्त, तुम संसार को अपने वश में करने का संकल्प रखते हो?

फिर अपने को नहीं। देखो दर्पण लेकर, तुम्हारी आंखों में यह तुम्हारा कौन–सा चित्र है?'' आगे चलकर वह इन शब्दों को भूल जाती है और चाणक्य के प्रति अपनी प्रणय–लालसा का निवेदन करती है। चाणक्य की शतरंजी चाल में फंसकर कार्नेलिया के यहाँ पहुँच जाती है। यदि चाणक्य स्वयं सुवासिनी को राक्षस के लिए सुरक्षित न छोड़ देता, स्वयं तथा त्याग न करता तो सुवासिनी चाणक्य के प्रति अपना अनुराग न छोड़ पाती। सुवासिनी के हृदय का अन्तर्द्वन्द्व चाणक्य और राक्षस को केन्द्र–बिन्दु बना कर, प्रसाद दिखलाना चाहते थे, पर सुवासिनी परिस्थितियों की विवश कठपुतली मात्र बन कर रह गयी है।

### 1.4.7 कल्याणी

कल्याणी मगध की राजकुमारी है। वह प्रसाद के नारी पात्रों में सर्वाधिक अभागी और व्यथा सहन करने वाली पात्र है। इसकी घोर वेदना और गहन अन्तर्द्वन्द्व से हमें गहरी सहानुभूति होती है। प्राच्य की राजकुमारी होने के कारण क्षत्रियोचित दर्प के साथ पर्वतेश्वर उससे विवाह करना अस्वीकार कर देता है। उसकी प्रतिक्रिया कल्याणी के कोमल और भावुक हृदय पर पड़ती है। निराशा की वेदना में वह पर्वतेश्वर की प्रतिद्वन्द्विता में खड़ी होती है। गान्धार के कानन में ही वीर–भूमि चन्द्रगुप्त की छवि और पर्वतेश्वर से प्रतिशोध के लक्ष्य निर्धारित किये थे, वे दोनों विफल हो गये। पर्वतेश्वर तो प्रताड़ित हुआ, कल्याणी ने उसकी हत्या कर दी किन्तु चन्द्रगुप्त से उसने कहा– ''मौर्य! कल्याणी ने वरण किया था केवल एक पुरुष को, वह था चन्द्रगुप्त। परन्तु तुम मेरे पिता के विरोधी हुए। अब मेरे लिए कुछ भी अवशिष्ट न रहा।'' कल्याणी अपनी गहन वेदना को अन्तस्थल में दबाए रही। उसके देखते–देखते मगध–साम्राज्य छिन गया। पिता की हत्या हो गई, जीवन में कुछ भी शेष न रहा। मगध के राज–सौध उसी तरह खड़े रहे, गंगा से शोण उसी तरह स्नेह से मिलती रही, नगर का कोलाहल पूर्ववत् रहा। पर कल्याणी का संसार कुछ और हो गया। वृषल नन्द की राजकुमारी के साथ मौखिक सहानुभूति प्रकट करने वाला कोई नहीं रहा। कोई भी नहीं बल्कि उसका आराध्य चन्द्रगुप्त भी नहीं।

निर्दोष मणि की भांति वह संसार में आयी और लुप्त हो गयी। अपने जीवन का 'अन्त' उसे स्वयं कर लिया! उसकी मृत्यु पर चाणक्य का यह कथन ''चन्द्रगुप्त, तुम आज निष्कण्ठक हुए'' क्रूरता और निर्ममता की पराकाष्ठा है। ऐसा लगता है कि मानों उसकी लाश को किसी ने पैरों से ठोकर लगा दी है। प्रसाद जैसे रोमांटिक दृष्टि वाले नाटककार ने कल्याणी के जीवन और मरण का चित्रण अत्यंत निष्ठुरता के साथ किया है।

### 1.4.8 मालविका

मालविका सिन्धु देश की राजकुमारी है। स्वर्गिक कुसुम–सी मालविका का उत्सर्ग अनौपचारिक प्रेम का आदर्श है। वह जीवन भर चन्द्रगुप्त से प्रेम करती रही, उसी के लिए उत्सर्ग हो गई पर उसने चन्द्रगुप्त को अपने मन के झुकाव का आभास भी न दिया। अवसर आने पर उसका सदुपयोग नहीं किया। चन्द्रगुप्त की शैय्या पर बैठने मात्र से उसमें जो मादकता जाग्रत होती है, वह कितनी सहज, मनोवैज्ञानिक और मादक है। एक बार सिर्फ एक बार जब चन्द्रगुप्त ने संगीत की मधुर तान सुनाने का आग्रह किया तो मालविका ने यह कह कर टाल दिया – ''युद्धकाल है, देश में रण–चर्चा छिड़ी है, आजकल मालव में कोई गाता–बजाता नहीं।'' चन्द्रगुप्त ने एक बार फिर संकेत किया और उससे आत्मीयता के व्यवहार का आग्रह किया– ''मेरा कोई अन्तरंग नहीं, तुम भी मुझे सम्राट कहकर पुकारती हो।'' अभागिन मालविका ने इस अवसर का भी लाभ नहीं उठाया। देश के प्रति, आराध्य के प्रति मंगल–कामना में ही डूबी रही। कर्त्तव्य और प्रणय के अन्तर्द्वन्द्व में कर्त्तव्य जीत गया, वह उत्सर्ग हो गयी। प्रसाद ने मालविका के कोमल नारीत्व के स्पन्दन को महत्व न देकर सामान्य रूप में उसका चित्रण किया है। डॉ0 जगन्नाथ शर्मा ने ठीक ही लिखा है– ''विशाल जन–समूह में एक हल्की–सी सुगन्ध धारा बन कर आती है और झुटपुटा–सा प्रभाव छोड़कर विलीन हो जाती है।''

## 1.5 आलोचना

### 1.5.1 कथानक

चंद्रगुप्त का कथानक विस्तृत होने के कारण सुसम्बद्ध नहीं हो पाया है। इसलिए इसकी कथा बिखरी हुई लगती है। एक ओर गान्धार और उसके पार्श्ववर्ती प्रदेशों में घटने वाली घटनाएँ आम्भीक का षड़यंत्र, सिकन्दर का आक्रमण, पर्वतेश्वर का विरोध आदि एक कथावस्तु के अंतर्गत है। मगध के नन्दवंश के उन्मूलन की कथा, पहली कथा से प्रायः असम्बद्ध है, वह अलग कथानक है। तीसरी घटनाएँ मालव की है। इन तीनों स्थानों में परिव्याप्त घटनाओं और संघर्षों को किसी एक केन्द्रीय संघर्ष में अन्तर्भुक्त नहीं किया जा सका। यद्यपि प्रसाद ने मगध, मालवा और गान्धार में घटित घटनाओं को चाणक्य और चन्द्रगुप्त के व्यक्तियों द्वारा एकसूत्रता प्रदान करने का प्रयत्न किया है किन्तु यह एकसूत्रता औपन्यासिक अधिक लगती है नाटकीय कम।

डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल कहते हैं नाटकीय तत्त्वों, घटनाओं और क्रिया–व्यापारों की अन्विति न मिल पाने के कारण चन्द्रगुप्त के अनेक स्थलों में कथा की गति में भारी अवरोध उत्पन्न हो गया है। प्रथम अंक की व्यापक घटनाएँ और क्रियाएँ दूसरे अंक के व्यापारों से पूर्णतया सम्बद्ध नहीं की जा सकी हैं। दूसरे अंक के विदेशी आक्रमण की कोई नाटकीय प्रतिक्रिया तीसरे अंक में नहीं हो पाती। तीसरा अंक अपने आप में गतिशील और पूर्ण है, किन्तु जहाँ तक चौथे अंक से सम्बन्ध की बात है वह गतिशून्य है। तीसरे अंक में दूसरी कथा समाप्त हो जाती है। ऐसी स्थिति में चौथा अंक अनपेक्षित और व्यर्थ प्रतीत होता है। वस्तु–संगठन की इन त्रुटियों के अतिरिक्त कलावधि का दोष भी नाट्यकला की दृष्टि से इस नाटक में है। सिकन्दर का भारत आक्रमण, नन्द कुल का उन्मूलन और सेल्यूकस की पराजय में 25 वर्ष का समय व्यतीत हुआ।

इन शिथिलताओं के बावजूद यह स्मरणीय तथ्य है कि चन्द्रगुप्त राष्ट्रीय भूमिका के व्यापक संदर्भ, विस्तृत देश की तत्कालीन घटनाओं और विशिष्ट परिस्थितियों में निर्मित नाटक है। प्रसाद ने इस नाटक की कथा–वस्तु में सम्पूर्ा भारतीय राष्ट्रीय जीवन को चित्रित करना चाहा है। इसीलिए विस्तार भार से वह बोझिल हो गया है, किन्तु इस नाटक द्वारा प्रसाद ने जातीयता, प्रान्तीयता तथा वैयक्तिक भेदों को मिटाकर व्यापक राष्ट्रीयता का आह्वान किया है। जिसके लिए यह विस्तार आवश्यक हो गया है। यद्यपि अनेक पात्र ऐसे हैं जो कथा के विकास में बाधा पैदा करते हैं, किन्तु राष्ट्रीय गौरव की दृष्टि से वे कम महत्वपूर्ण नहीं है। अलका के देश–सेविका–रूप को अधिक उभारा गया है, जिससे कृत्रिमता आ गयी है। कार्नेलिया की सृष्टि ऐतिहासिक है, किन्तु कथा की गति में वह अनेक स्थलों पर अनावश्यक गतिरोध पैदा करती है। मालविका का बलिदान और कल्याणी की निरीह आत्माहुति का राष्ट्र–सेवा देश–प्रेम के लिए महत्त्व है पर कथा की गति के लिए उसका मूल्य शून्य है। चाणक्य और सुवासिनी की प्रेम–कथा भी अनावश्यक है जो वस्तु–योजना में बिल्कुल सहायक नहीं है। फिर भी 'चन्द्रगुप्त' एक सोद्देश्य और महत्वपूर्ण नाटक है जो नाट्य साहित्य में अपनी विशेषताओं के कारण पठनीय है और स्मरणीय भी। हिमाद्र तुंग शृंग से.... इस गीत द्वारा तत्कालीन भारत में स्वतंत्रता का जो आह्वान किया गया है वह भी विलक्षण है।

### 1.5.2 अभिनेयता

चन्द्रगुप्त नाटक का वस्तु–शिल्प विस्तारभार से बोझिल है अतः इसकी अभिनेयता पर प्रश्न चिह्न लगते रहे हैं। इसकी कालावधि पच्चीस वर्षों की है। रंगमंच में काम करने वाले कार्नेलिया, कल्याणी, मालविका, सुवासिनी, अलका, चन्द्रगुप्त, राक्षस आदि 25 वर्ष के बाद भी युवा माने जाते हैं। प्रारम्भ में आने वाले पात्रों चन्द्रगुप्त, कार्नेलिया तथा राक्षस–सुवासिनी के विवाह, नाटक के अन्त में होने से वृद्ध–वृद्धाओं का विवाह और प्रणय–प्रदर्शन हो जाता है। यद्यपि डॉ0 जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने इस सम्बन्ध में कहा है– ''नाटककार के रचाना–कौशल की शक्ति से अतीत को भी प्रत्यक्ष होते हुए देखकर सामाजिक यदि इतना साधारणीकरण की परवशता में नहीं आ सकता तब तो सादा

रंगमंच और उस पर होने वाले सहस्र व्यापार भले ही नाटक, संकलन–त्रय के सिद्धांतों के अनुसार ही क्यों न लिखा गया हो उसे एक बाल–क्रीड़ा ही मालूम पड़ेंगे क्योंकि उसके लिए नकल और अभिनय ही हो रहा है, इस बात को भूल जाना उतना ही दुष्कर है जितना इतिहास की घटनाओं की काल–तालिका को। नाटक में प्रदर्शित एक धारावाही घटनावली की योजना सुसंगत रूप में जहाँ तक चली है उसे तीन–चार घण्टों में प्रत्यक्ष देख लेने पर ऐतिहासिक दूर का ध्यान आ ही नहीं सकता। काव्य–रसानुभूति ऐसे ही अवसरों पर सहृदय और असहृदय का भेद कर देती है और रूक्ष, लौकिक बुद्धिग्राह्यता को वह इस प्रकार तिरोहित कर देती है कि सामाजिक आनन्द–विस्मृत हो उठता है। यदि यह स्थिति नहीं उत्पन्न हो पाती तो चाहे नाटक हो अथवा काव्य, हमें बिल्कुल प्रसन्न नहीं कर सकता।'' किन्तु वहाँ यह विस्मृत कर दिया गया है कि नाटक का सम्बन्ध केवल दर्शकों से नहीं है, अभिनेताओं से भी है यदि अभिनेता में पच्चीस वर्ष के काल को कौशलपूर्वक न दिखाया जायेगा तो दर्शकों में रसोद्रेक कैसे होगा? दूसरी बात यह है कि ऐतिहासिक घटनाओं को देखने वाला दर्शक यह कैसे भूल सकता है कि वह इतिहास की विगत घटना को देख रहा है। हाँ, रसोद्रेक में वह उन घटनाओं की प्रत्यक्ष अनुभूति कर सकता है किन्तु तीन–चार घण्टों के अन्तराल में वह पचीस–पचीस वर्षों के अन्तर को अवश्य समझ लेगा।

चन्द्रगुप्त में पाँच अंक हैं। प्रथम और द्वितीय अंक में ग्यारह–ग्यारह दृश्य हैं। तृतीय में नौ तथा चतुर्थ में सोलह दृश्य हैं। उत्तरोत्तर अंकों के दृश्यों में कमी होनी चाहिए, न कि वृद्धि। यही कारण है कि नाटक के चतुर्थ अंक का अतिशय विस्तार हो गया है और बहुत सा अंश अनावश्यक हो गया है। अंकों के आरोह–अवरोह तथा विभाजन में प्रसाद की कला विशेष रूप से निखरी हुई है। वहाँ तक कि किस अंक को कहाँ से प्रारम्भ करने पर ध्वनि, गति तथा प्रभाव उत्पन्न होगा का विचार भी उन्होंने किया है।

चरित्र–शिल्प की दृष्टि से यह नाटक सफल है। पात्रों का वैयक्तिक चरित्र, मनोवैज्ञानिक उतार–चढ़ाव तथा द्वन्द्व–चित्रण ऐतिहासिक सन्दर्भ में बड़े ही सटीक ढंग से किया गया है। जीवनानुभूतियों की सुक्ष्मातिसूक्ष्म व्याख्या इसमें है। पात्रों का स्तर भारतीय गरिमा से मण्डित है। सभी पात्रों में जीवन्तता है– कृत्रिमतर का आरोप उनमें नहीं है। कहीं भी नाटककार ने पात्रों पर अपने व्यक्तित्त्व का आरोपण नहीं किया है। चरित्रों की जीवन्तता, राष्ट्रीयता और काव्यात्मक दार्शनिकता प्रसा के चरित्र–चित्रण की विशिष्ट प्रकृति है। प्रसाद जी ने अपने चरित्रों को वीरोदात्त, वीरललित आदि के बंधे–बंधाये आदर्शों के सांचे में नहीं डाला।

प्रस्तुत नाटक में प्रसाद जी ने अपनी ऐतिहाकि शोध–बुद्धि का परिचय दिया है। संपूर्ण नाटक में उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि चन्द्रगुप्त, वृषल मौर्य, क्षत्रिय है। भूमिका में विस्तृत शोध करने के बाद भी प्रसाद जी ने नाटक में यथावसर इस बात का उल्लेख किया है।

**पर्वतेश्वर** – हाँ तो इस मगध–विद्रोह का केन्द्र कौन होगा? नन्द के विरूद्ध कौन खड़ा होता है।

**चाणक्य** – मौर्य सेनानी का पुत्र वीर चन्द्रगुप्त जो मरे साथ यहाँ आया है।

**पर्वतेश्वर** – पिप्पली–कानन के मौर्य भी तो वैसे ही वृषल हैं, उनको राज्य सिंहासन दीजिएगा।

**चाणक्य** – आर्य क्रियाओं का लोप हो जाने से इन लोगों को वृषलत्व मिला, वस्तुतः ये क्षत्रिय हैं। बौद्धों के प्रभाव में आने से इनके श्रौत–संस्कार छूट गये हैं अवश्य, परन्तु इनके क्षत्रिय होने में कोई सन्देह नहीं।''

एक दूसरे स्थान पर चाणक्य व्यंग्य के साथ पर्वतेश्र से पूछता है ''वृषल चन्द्रगुप्त क्षत्रिय है या नहीं, अथवा उसे मूर्धाभिषिक्त करने में ब्राह्मण से भूल हुई?''

इन स्थलों से प्रसाद को ऐतिहासिक तथ्यों की खोज का परिचय मिलता है किन्तु नाटकीय शिल्प में बाधा पड़ती है।

चन्द्रगुप्त नाटक के कथानक संगठन और चरित्र–विकास के शिल्प में प्रसाद जी विशाख के 'मुद्राराक्षस' और द्विजेन्द्रलाल राय के बंगला नाटक 'चन्द्रगुप्त' से प्रभावित हैं। अपनी प्रतिमा और कल्पना के वर्चस्व से उन्होंने इस नाटक में निजता ला दी है। रोमांटिक दृष्टि के कारण नाटक में काव्यात्मक दार्शनिकता आ गई है। कथानक का संघर्ष और पात्रों का अन्तर्द्वन्द्व पाश्चात्य नाट्य शिल्प के नाट्य की प्रेरणा है। उन सबको प्रसाद ने अपनी प्रतिभा के निजत्व से अलंकृत किया है। डॉ0 जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने चन्द्रगुप्त नाटक में कार्य की अवस्थाओं, अर्थ–प्रकृतियों और सन्धियों के समावेश का विस्तार से विवेचन किया है। किन्तु इस नाटक को संस्कृत की इन परम्पराओं पर पूर्णतया आधारित बताना उचित नहीं प्रतीत होता।

चन्द्रगुप्त नाटक की अभिनेयता की सफलता पर प्रश्नचिह्न लगाया जाता है। घटना विस्तार, दृश्यों की बहुलता, लम्बे–लम्बे दार्शनिक संवाद, काव्यात्मक संवाद, भाषा की क्लिष्टता पर संदेह प्रकट किया जाता है। हिन्दी में एक तो उपयुक्त रंगमंच नहीं है, दूसरे कुशल अभिनेताओं का अभाव है। कुछ सुधार के साथ चन्द्रगुप्त को अभिनेय बनाया जा सकता है किन्तु प्रश्न यह है कि इस नाटक के रंगमंचोपयुक्त होने पर भी देश के अनेक विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों या रवीन्द्र–भवनों या नाट्य–गृहों में इसका प्रदर्शन सफलतापूर्वक किया गया है। अपने औदात्य के कारण इसे हिन्दी का बेजोड़ ऐतिहासिक और राष्ट्रीय नाटक माना गया है। घटिया दर्जे के नाटक भी रंगमंच में सफल हो जाते हैं, तो क्या उन्हें नाटकों का आदर्श मान लेना चाहिए? अगर रंगमंच और नाटक की श्रेष्ठता का अनिवार्य सम्बन्ध है तो चन्द्रगुप्त के श्रेष्ठ नाटक होने के कारण इसे मंचोपयुक्त भी मानना पड़ेगा। हाँ रंगमंच के स्तर को सधारना होगा। दर्शकों की रुचि को बदलना होगा। उदात्त नाटकों के दर्शकों और नौटंकी के दर्शकों में अंतर करना ही होगा।

### 1.5.3 गीत–योजना

प्रसाद के अन्य नाटकों की भांति चन्द्रगुप्त में भी गीत–योजना है। इसमें कुल मिलाकर तेरह गीत हैं। इन्हें तीन वर्गों में बांटा जा सकता है– 1. समवेत गीत 2. नेपथ्य गीत 3. व्यक्तिगत गीत।

समवेत गीत में बड़ा सार्थक बिम्ब है। अलका का, नागरिकों के साथ यह गान 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' अपने ओजस्वी स्वरों द्वारा उत्साह तथा जागरण का वातावरण निर्मित करता है। नेपथ्य–गीत एक है, वह साधारण है विवरणात्मक है। यह नेपथ्य–गीत किसी भी प्रयोजन की सिद्धि नहीं करता। व्यक्तिगत गीत भी तीन प्रकार के हैं– राष्ट्रीय, सांस्कृतिक गीत, नर्तकियों के गीत और प्रेयसियों के गीत। कार्नेलिया का गीत राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक है। सुवासिनी के गीत नर्तकियों के गीत हैं तीनों गीतों में उद्दीपन तत्त्व है। मालविका के दो गीतों में भी उद्दीपन है। प्रेयसियों के गीतों में कल्याणी और मालविका के गीत हैं, जिनमें व्यथा है।

प्रसाद के इन नाट्य गीतों में काव्यात्मक सौष्ठव की उत्कृष्टता है। नाट्य व्यापार की योजना की पूर्ति में भी ये गीत सहायक हैं। समय और परिस्थिति के अनुरोध को मानकर चलने वाले गीत हैं। कथा–प्रवाह की गत्यात्मकता में ये गीत बाधा नहीं उत्पन्न करते। चन्द्रगुप्त के गीतों की यही विशेषता है कि वे दर्शक या पाठक को कथा–प्रवाह की अक्षुण्णता के साथ गहरी तल्लीनता में डुबाये रखने की सामर्थ्य वाले गीत हैं। अधिकांश आलोचकों ने प्रसाद के गीतों में दुरूहता अस्पष्टता और दार्शनिकता का आरोप लगाया है। जैसा कि डॉ0 दशरथ ओझा ने लिखा है– ''प्रसाद के गीत विषय प्रधान नहीं, विषयी प्रधान हैं। अतःकवि की नई कल्पना, नवीन उद्भावना , चिन्तन की नवीन वैज्ञानिक पद्धति और सान्द्र अनुभूति के कारण भी ये गीत दुरूह और अस्पष्ट प्रतीत होते हैं। प्रसाद के गीतों में दुरूहता केवल शैली की नवीनता के ही कारण नहीं है, विचारों की सूक्ष्मता भी उनमें ऐसी है कि सहसा बुद्धि जिन्हें पकड़ नहीं पाती।'' किन्तु यह कथन चन्द्रगुप्त नाटक के लिए लागू नहीं होता। इसके अधिकांश गीत राष्ट्रीय–सांस्कृतिक हैं। इस नाटक के गीतों द्वारा एक ओर तो कथा–प्रवाह की गत्यात्मकता में जीवन्तता आई है तथा दूसरी ओर चरित्र–विश्लेषण होता गया है।

### 1.5.4 नाटक में ऐतिहासिक एवं कल्पना का समन्वय

चन्द्रगुप्त ऐतिहासिक नाटक है जिसका ऐतिहासिक वृत्त मौर्यकाल पर आधारित है। प्रसाद ने इतिहास की सामग्री का अनुसंधान करके ही तत्कालीन घटनाओं का अपने नाटकों में समावेश किया है। मौर्यकाल की सामग्री बिखरी हुई एवं प्रक्षिप्त है ऐसा माना जाता है। ऐसी स्थिति में इस काल की सामग्री को आधार बनाकर नाटक की रचना करते हुए प्रसाद का उत्तरदायित्व बड़ जाता है। प्रसाद भारतीय इतिहास का प्रामाणिक रूप ही नाटकों में अंकित करते हैं। प्रसाद से पूर्व किसी ने इतिहास को रचनात्मक रूप देते हुए नाटक की रचना करना है यह बात गंभीरता से नहीं सोची। प्रसाद जी ने चन्द्रगुप्त में कल्पना का प्रयोग वहीं तक किया है जहाँ तक वह नाटकीयता के लिए उपयोगी है ऐसी कल्पना जो ऐतिहासिक संदर्भों से कटी हुई न हो। जहाँ कहीं कल्पना का अतिरेक है वहाँ पात्रों के चरित्र को सूक्ष्मता से अभिव्यक्त करना ही अभीष्ट रहा है। इतिहास के पात्रों को मनोविज्ञान की दृष्टि से परखने का कार्य और प्रयास इसी युग में हुआ। प्रसाद की दृष्टि दीर्घकाल का सूक्ष्म अन्वेषण करने में सक्षम थी। वे समन्वयात्मक ऐतिहासिक दृष्टि रखते हुए भारत की भव्य झांकी नाटकों के माध्यम से प्रस्तुत करना चाहते थे।

चन्द्रगुप्त नाटक में चाणक्य के रूप में भारत के बौद्धिक एवं राजनैतिक उत्कर्ष को दिखाना उनका लक्ष्य था तो चन्द्रगुप्त, सिंहरण, अलका, कार्नेलिया आदि के माध्यम से देशभक्ति, त्याग, बलिदान की भावना, भारतीय संस्कृति के गौरवशाली और मर्यादित स्वरूप को दिखाना भी उनका अभीष्ट था। भारतीय संस्कृति परिवेश में प्रेम की मर्यादा, सीमाएँ और स्वरूप को भी उन्होंने चाणक्य तथा अन्य स्त्री व पुरुष पात्रों के माध्यम से दिखाया है। इसमें काल्पनिकता का समन्वय है जो इतना सूक्ष्म है कि दिखाई नहीं देता। चन्द्रगुप्त में ऐतिहासिकता पर कल्पना का प्राधान्य नहीं है। यही कारण है कि इस नाटक की ऐतिहासिकता पर शिथिलता हावी नहीं होती। चन्द्रगुप्त नाटक में ऐतिहासिक परिदृश्य में अंतर्राष्ट्रीय मेल–जोल दिखाकर मानवता का पथ प्रशस्त किया गया है। यह कारण ऐतिहासिक समस्याओं को दिखाकर वर्तमान और भविष्य के लिए समाधान प्रस्तुत करता है। राष्ट्रीयता, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक एकता के स्थापन का संदेश देता है। युद्ध और शांति के संघर्ष को दिखाकर शांति की स्थापना के लिए प्रेरित करता है। यह भारतीय धर्म एवं संस्कृति का गौरव माना जाता है। राष्ट्रीय एवं प्रेम–गीतों की योजना में कल्पना का समन्वय अद्भुत है जो सहज लगता है। इतिहास के तथ्यों की सामग्री लेकर प्रसाद जी ने चन्द्रगुप्त को सशक्त रूपाकार प्रदान किया है। इस नाटक की ऐतिहासिक कथावस्तु को सरस और आकर्षक, रोचक और पठनीय, उद्देश्यपूर्ण बनाने में वे सफल रहे हैं। यह श्रेष्ठ नाटक है जिसने अन्य नाटककारों को ऐतिहासिक नाटक लिखने की प्रेरणा दी। आधुनिक यांत्रिक युग में जबकि नई पीढ़ी अति व्यस्त तथा अतीत के सुनहरे पृष्ठों से अनजान है, प्रसाद जी का बड़ा उपकार है कि उन्होंने ऐतिहासिक नाटकों के माध्यम से नई पीढ़ी को उससे परिचित होने का अवसर दिया।

### 1.5.5 संवाद योजना

कथोपकथन नाटक का प्रमुख उपजीव्य है। कथोपकथन (संवाद) द्वारा पात्रों के मनोभावों और क्रियाओं की अभिव्यक्ति होती है। चन्द्रगुप्त के पात्रों के कथोपकथन में उनके अन्तःस्थल की गहन अभिव्यक्ति है। चन्द्रगुप्त में परिस्थितियों की विभिन्नता और मानसिक स्थितियों की विविधता के कारण कथोपकथन की शैली को अनेक रंग–रूप मिले हैं।

चन्द्रगुप्त नाटक में भावों के अनुकूल भाषा और संवादों का गठन है। प्रसाद के नाटकों में सबसे अधिक बुद्धिजीवी पात्र चाणक्य है पर जब वह राजनीतिक विचारणा में कुछ कहता है तो संवाद गंभीर तथा रूखे होते हैं। जब भावुकता की बात करता है तब कथन में संवेगात्मकता आ जाती है, भाषा की कोमलता अभिषिक्त कर देती है किन्तु क्रोध के अवसर पर उसके शब्दों से चिंगारियाँ फूटती हैं। उदाहरणों से यह बात अधिक स्पष्ट होगी।

राजनीतिक स्थिति की व्याख्या करते हुए चाणक्य, सिंहरण से कहते हैं– ''तुम मालव हो ओर वह मागध,

यही तुम्हारे मान का अवसान है न? परन्तु आत्म–सम्मान इतने ही से संतुष्ट नहीं होगा। मालव और मागध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त का नाम लोगे तभी वह मिलेगा।'' यही चाणक्य कितनी संवेदना और भावुकता से भर कर कोमल शब्दों में सुवासिनी से कहते हैं –''सुवासिनी! वह स्वप्न टूट गया, इस विजन बालुका–सिंधु में एक सुधा की लहर दौड़ पड़ी थी, किन्तु तुम्हारे एक भ्रु–भंग ने उसे लौटा दिया। मैं कंगाल हूँ।''

नन्द की राज–सभा में अपमानित चाणक्य का संवाद देखिए– ''खींच ले ब्राह्मण की शिखा! शूद्र के अन्न से पले हुए कुत्ते! खींच ले। परन्तु यह शिखा नन्दकुल की कालसर्पिणी है, वह तब तक बन्धन में न होगी जब तक नन्दकुल निःशेष न होगा।''

चन्द्रगुप्त के संवादों में व्यंग्य–योजना अच्छी है। हृदय की खीझ और मानसिक आक्रोश को तीव्र बनाने के लिए व्यंग्य का पैना अस्त्र चन्द्रगुप्त ने अमोघ रूप से छोड़ा है। आम्भीक के पूछने पर कि तुम्हारी बातचीत में कुछ रहस्य है, सिंहरण उत्तर देता है।

''हाँ, हाँ रहस्य है! यवन आक्रमणकारियों के पुष्कल स्वर्ण से पुलकित होकर, आर्यावर्त को सुख–रजनी की शांति–निद्रा में, उत्तरापथ की अर्गला खोल देने का रहस्य है। क्यों राजकुमार! सम्भवतः तक्षशिलाधीश वाल्हीक तक इसी रहस्य का उद्घाटन करने गये थे।''

चमत्कार लाने के लिए प्रसाद ने चन्द्रगुप्त में ऐसे कथोपकथनों की योजना की है जिसमें पहले के प्रसंग के कुछ शब्दों को दोहराते हुए दूसरा पात्र सम्मुख आ जाता है; जैसे–

**सिंहरण** –उत्तरापथ के खण्ड राज्य–द्वेष से जर्जर है। शीघ्र ही भयानक विस्फोट होगा।

**आम्भीक** – (सहसा प्रवेश) ''कैसा विस्फोट? तुम कौन हो?'' ऐसे अनेक स्थल हैं।

**कार्नेलिया**– परन्तु वैसा न हुआ। सम्राट ने फिलिप्स को यहाँ का शासक नियुक्त कर दिया है।

**फिलिप्स** – तो बुरा क्या है कुमारी! सिल्यूकस के क्षत्रपन होने पर भी कार्नेलिया यहाँ की शासक हो सकती है। फिलिप्स अनुचर होगा।

ऐसे स्थलों पर 'रस' के अनुकूल संवाद–योजना नहीं निखर सकी। इनमें चमत्कार ही प्रधान रूप है। अन्यथा चन्द्रगुप्त में सर्वत्र पदावली रस के अनुकूल है।

चन्द्रगुप्त के कथोपकथन में 'एकरसता' का दोष लगाया जाता है। भाषा टकसाली है और सभी पात्र एक ही प्रकार की भाषा बोलते हैं। इस प्रश्न का सम्बन्ध प्रसाद के सभी नाटकों के कथोपकथनों से है, जिसका उत्तर प्रसाद जी ने स्वयं दिया था कि वे पात्रों के अनुसार भाषा बदलने के पक्षपाती नहीं थे। विभिन्न भागों में पात्रों गान्धार, मगध, मालव की भाषा को अलग–अलग लिखने या राजा, रानी, भृत्य, विद्वान आदि की भाषा को अलग–अलग प्रयोग करने से नाटक 'भाषाओं' के प्रयोग का अजायब–घर हो जायेगा।

### 1.5.6 चन्द्रगुप्त नाटक में अंतर्द्वंद्व योजना

चन्द्रगुप्त नाटक में अंतर्द्वन्द्व को दर्शाने वाले अनेक दृश्य हैं जो स्वागत कथन के रूप में प्रकट होते हैं। वे सूक्ष्म तथा गूढ़ मनोदशाओं का चित्रण करने के, अभिव्यंजना करने के लिए स्वगत कथन का उपयोग करते हैं। यद्यपि प्रसाद जी स्वगत–कथन के विरोधी थे किन्तु चन्द्रगुप्त में अनेक स्थलों पर स्वगत–भाषण के प्रयोग हैं। प्रगाढ़ वैयक्तिक संवेदनाओं को स्वगतोक्ति में कहना अस्वाभाविक नहीं लगता। तृतीय अंक के प्रथम दृश्य के प्रारम्भ में राक्षस का 'स्वागत' उसकी वैयक्तिक संवेदना की अभिव्यक्ति करता है। मगध में आने पर शैशव की स्मृतियों में विभोर चाणक्य का स्वगत भी भावाकुल संवेदना की अभिव्यक्ति करता है– ''मैं अविश्वास, कूट–चक्र और छलनाओं

का कंकाल, कठोरताओं का केन्द्र! आह! तो इस विश्व में मेरा कोई सहृदय नहीं है, मेरा सकंल्प, अब मेरा आत्माभिमान ही मेरा मित्र है और थी एक क्षीण रेखा, वह जीवन–पट से धुल चली है। धुल जाने दूँ? सुवासिनी....न न न, वह कोई नहीं? मैं अपनी प्रतिज्ञा पर आसक्त हूँ।''...आदि।

जो स्वगत दृश्य के मध्य में या घटनाओं के संदर्भ में आये हैं, वे कथावस्तु के अनिवार्य अंग नहीं बन पाये हैं। चन्द्रगुप्त के प्रथम अंक में सिंहरण का स्वगत 'एक अग्निय...मयूर–से नायेंगे।' अस्वाभाविक लगता है।

### 1.5.7 राष्ट्रीय चेतना

चन्द्रगुप्त राष्ट्रीय चेतना का ऊर्जस्वित नाटक है। इसमें अपने युग की समूची राष्ट्रीयता को ऐतिहासिक संदर्भ में देखा गया है। चन्द्रगुप्त का प्रकाशन–काल सन् 1951 है। जब राष्ट्रीय आन्दोलन में गांधी जी के अस्त्रसत्य और अहिंसा या सत्याग्रह का प्रयोग कसौटी पर था, उग्र पंथी दलों ने हथियार उठाने का आग्रह करना प्रारम्भ कर दिया था। विदेशियों की भेद–नीति प्रखरता के साथ चल रही थी। पंजाब, बंगाल, बिहार, आसाम आदि को वे शेष भारत से अलग–थलग कर देना चाहते थे। जातिगत, वर्गगत भेद भी उभरे जा रहे थे। महात्मा गांधी तथा अन्य नेता समग्र राष्ट्रीयता की भावना को उजागर करने में लगे हुए हैं। ऐसे अवसर पर प्रसाद ने तक्षशिला में चाणक्य के द्वारा यह कहलाया– ''मालव और मागध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त का नाम लोगो तभी वह आत्म–सम्मान मिलेगा।''

सिंहरण ने उसी एकता की भावना को इन शब्दों में व्यक्त किया है– ''परन्तु मेरा देश मालव ही नहीं, गान्धार भी है। यही क्यों, समग्र आर्यावर्त है।'' अलका ने भी गान्धार को विस्मरण कर कहा था– ''मैं भी आर्यावर्त की बालिका हूँ।'' सच बात यह है कि अलका का निर्माण प्रसाद ने राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने वाली देश–सेविकाओं को दृष्टि में रखकर ही किया है। उन दिनों अच्छे–अच्छे घरों की महिलाएँ, कल्याएँ, तिरंगा झण्डा ले कर गली–गली जाती और देश–सेवा का अलख जगाती थीं। उन दिनों इस गीत के भावों की अनुगूंज सर्वत्र सुनने को मिलती थी–

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से  
प्रबुद्ध शुद्ध भारती  
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला  
स्वतंत्रता पुकारती।

जिस प्रकार चन्द्रगुप्त के समय में पर्वतेश्वर का विरोध और नन्द कर रहे थे और वह बात नहीं समझ रहे थे कि पंचनद की रक्षा न होगी तो मगध, मालवा और गान्धार कोई न बचेगा, उसी प्रकार राष्ट्रीय आन्दोलनों के दिनों में बहुत से वर्ग के लोग अंग्रेजों का समर्थन कर रहे थे। फूट और आन्तरिक विद्रोह के कारण विदेशी शासकों को देश से हटाया नहीं जा सका था। इतिहास ने चाणक्य और चन्द्रगुप्त के माध्यम से देश को एक सूत्र में बांध दिया। गांधी जी भी इसी प्रयास में रत थे। देश के कोने–कोने से आन्तरिक विग्रह को समाप्त करने की वाणी फूट रही थी। प्रसाद जी ने इस नाटक के माध्यम से देश–प्रेम और राष्ट्रीयता की प्रेरणा दी।

चन्द्रगुप्त नाटक में भारत की अगाध महिमा और गरिमा वर्णित है। कार्नेलिया के मुंह से भारत से जन्म–भूमि के समान स्नेह होता जाता है, सुन कर प्रसन्नता होती है। 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' यह बिम्बप्रधान राष्ट्रगीत कार्नेलिया के द्वारा वर्णित है। प्रसाद ने विदेशियों के मुंह से भारत की महिमा का वर्णन कराया है। सिल्कूकस और सिकन्दर भी यहाँ की आध्यात्मिकता की प्रशंसा करते हैं। चन्द्रगुप्त और सिंहरण सिकन्दर को घायल करके छोड़ देते हैं। इससे भारत की राष्ट्रीयता का व्यक्तित्त्व उभरता है। अन्य देश के लोग भी भारत पर गौरव करते हैं। राष्ट्र–प्रेम की यह भावना कितनी प्रेरक है– ''मेरा देश है, मेरे पहाड़ हैं, मेरी नदियाँ है और मेरे जंगल हैं।

इस भूमि के एक–एक परमाणु मेरे हैं और मेरे शरीर के एक–एक क्षुद्र उन्हीं परमाणुओं के बने हैं।''

चन्द्रगुप्त नाटक राष्ट्रप्रेम और भारत की गरिमा का महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है।

### 1.5.8 राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना

ऐतिहासिक, पौराणिक और काल्पनिक कथानकों का चयन करके भी इस युग के नाटककारों ने राष्ट्रीयता तथा युगीन चेतना का समावेश किया। विस्मृति के खण्डहरों में छिपे हमारे जर्जर ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आलोक–खण्डों का पुनर्निर्माण वर्तमान के संदर्भ में इन नाटककारों ने किया। युगों से विदेशियों के आक्रमण इस देश में होते रहे हैं। शक, हूण, मुसलमान जातियों ने इस देश में आक्रमण किया। अंग्रेजों ने इस पर बहुत समय तक छल–बल से शासन किया। प्रसाद–युग के नाटककारों को विदेशियों का शासन बराबर क्षुब्ध करता रहा। विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व से आतंकित भारतीय हृदय को शक्ति और अनुराग का अवलम्ब देकर, आश्वस्त किया। आत्मबल का विश्वास दिलाया। विदेशियों के आक्रमण का प्रतिरोध करने वाले चन्द्रगुप्त तथा स्कन्दगुप्त का चरित्र प्रस्तुत करके प्रसाद ने अखण्ड राष्ट्रीयता का स्वर ऊंचा किया। विजय–मद से चूर, पशु–बल से गर्वित तथा उद्धत विदेशियों की चुनौती को प्रसाद के इन नाटकों द्वारा स्वीकार किया गया।

सिंहरण ने भारत की भौगोलिक एकता पर बल दिया है क्योंकि इस देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यही रहा है कि समग्र शक्तियों ने एक हो कर कभी विदेशियों का सामना नहीं किया– ''मालव और मागध को भूलकर जब तुम आर्यावर्त का नाम लोगे, तभी वह मिलेगा।'' इसीलिए आगे चलकर सिंहरण कहता है– ''मेरा देश मालव ही नहीं, गांधार भी है समग्र आर्यावर्त है।'' चाणक्य की प्रेरणा, चन्द्रगुप्त की वीरता और सिंहरण तथा अलका की निष्ठा के कारण सारा आर्यावर्त एक हो गया। क्षुद्रक, मालव, पंचनद, यौधेय गणराज्य एक हो गए। प्रसाद–युग के सभी नाटककारों ने देश की एकता और राष्ट्रय चेतना का प्रयास किया।

प्रसाद–युग की समूची चारित्र्य सृष्टि में सांस्कृतिकता है अन्तर्संघर्ष और बाह्य संघर्ष का चित्रण है। संघर्ष के इन्हीं दोनों स्तरों के मध्य उनके पात्रों की जीवन–सरिता बहती है। पात्र–सृष्टि का विकास इसी संघर्ष के घात–प्रतिघात से होता है। यह संघर्ष इस युग में निम्नलिखित रूपों में चित्रित है –

1. सात्विक और राजसिक पात्रों के साथ तामसिक व्यक्तित्त्व रखने वाले पात्रों का संघर्ष है।
2. एक संस्कृति, राज्य, जाति अथवा धर्म का दूसरी संस्कृति, राष्ट्र, राज्य अथवा धर्म के साथ संघर्ष इस प्रसंग में एक पात्र किसी विशिष्ट संस्कृति, धर्म, राज्य या जाति का प्रतिनिधि बन कर आया है, तो दूसरा पात्र किसी अन्य संस्कृति, राष्ट्र, राज्य या धर्म का प्रतिनिधि बन कर। सिकन्दर का आक्रमण विदेशी एवं भारतीय संस्कृति के टकराव एवं नई स्थापना को दर्शाता है।
3. अन्तर्संघर्ष इस संघर्ष का स्वरूप अधिकांश पात्रों में देश–प्रेम, कर्त्तव्य–निष्ठा और वैयक्तिक प्रणव के मध्यम संघर्ष दिखलाने की प्रवृत्ति में है।
4. गृहकलह इस संदर्भ में देश में व्याप्त, भौगोलिक सीमाओं, सत्तालिप्सा तथा पारस्परिक कलह को आधार बनाया गया है।

इस नाटक में प्रसाद के चन्द्रगुप्त, चाणक्य, सिंहरण, कार्नेलिया, कमला, अलका, कल्याणी आदि सात्विक तथा राजसी प्रवृत्ति के पात्र हैं।

प्रसाद के नाटकों में नियति, दार्शनिकता, कर्मयोग का समावेश इस बात का द्योतक है कि प्रसाद में भारतीय संस्कृति के प्रति गहन आस्था है। उनके प्रायः सभी नाटक भारतीय संस्कृति के गहरे रंग में डुबे हुए हैं,

लेकिन वे किसी भी अर्थ में पुनरुत्थानवादी नहीं हैं। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर भारतीय संस्कृति के चित्रों को खूब उभारकर चित्रित किया है, किन्तु ह्रासोन्मुखी संस्कृति का चित्रण भी उन्होंने किया है। उनके ऐतिहासिक–सांस्कृतिक चित्रों में वर्तमान और भविष्य के लिए जीवन्त संदेश भरे पड़े हैं। देशभक्ति और राष्ट्रीयता का समावेश उनकी सांस्कृतिक निष्ठा का परिणाम है। प्रसाद–युग के नाटकों में ऐतिहासिकता, राष्ट्रीयता और भारतीयता का समावेश सांस्कृतिक चेतना का ही परिणाम है।

प्रसाद की सांस्कृतिक चेतना परम्परागत मानों को स्वीकार करती हुई जो आधुनिकता से सम्पृक्त है। इस सांस्कृतिक चेतना और जीवन–दर्शन का मूलाधार मानवतावादी है। वह मानवतावाद भौतिकवादी जीवन–दर्शन और अध्यात्म के समन्वय से बना है। इनमें विवेकानन्द, रवीन्द्र और गांधी की अनुभूति, निष्ठा और आस्था का समन्वय है। प्रसाद–युग ने इसी सांस्कृतिक चेतना को अपने नाटकों में उतारा है।

### 1.5.9 भाषा शैली

चन्द्रगुप्त नाटक की भाषा में प्रसाद जी भाषा का प्रयोग भावों के अनुसार करते हैं, पात्रों के अनुसार नहीं। चन्द्रगुप्त की भाषा में वैविध्य है। वह भावों के अनुसार बदलती है, पात्रों में भी भावगत अंतर होने से भाषा बदल जाती है। चाणक्य की भाषा और मालविका की भाषा में अंतर है किन्तु पात्रों की भाषा में एकरसता है। यानी चाणक्य एक ही तरह की भाषा आदि से अन्त तक बोलता है। चन्द्रगुप्त भी एक ही तरह की भाषा बोलता है। भाषा की एकरूपता पूरे नाटक में एकरसता ला देती है। प्रसाद जी अलंकृत एवं काव्यमयी भाषा का प्रयोग करते हैं। भाषा में तत्सम शब्दावली का अधिक्य होते हुए भी वह सहज पात्रानुकूल एवं प्रवाहमयी लगती है। अवसर के अनुसार छोटे या बड़े वाक्य, मुहावरे, ओज एवं दीप्ति वाक्यों से झलकती है। चन्द्रगुप्त नाटक में देशी, विदेशी पात्रों का समन्वय होने के कारण भाषा वैविध्य उसे आकर्षक बनाता है। प्रसाद जी की भाषा सहज, सरल, सरस, प्रवाहमयी, रंगमंच के उपयुक्त है।

**'अपनी प्रगति जांचिए'**

1. वररुचि कौन था?
2. चाणक्य का परिचय दीजिए?
3. नंद कौन था?
4. चन्द्रगुप्त कौन था?
5. सिकन्दर कौन था?

## 1.6 सारांश

चन्द्रगुप्त प्रसाद का ऐतिहासिक नाटक है। यह 1931 में प्रकाशित हुआ। ऐतिहासिक अनुसंधान से प्राप्त सामग्री का प्रयोग कर प्रसाद ने इस ऐतिहासिक तथा काव्यात्मक नाटक की रचना की है। ऐतिहासिक घटनाओं के व्यापक संदर्भ में राष्ट्रीय भावनाओं से ओत–प्रोत इस नाटक की रचना प्रसाद की नाट्य कला की क्षमता तथा उनके कवित्व का महत्त्वपूर्ण आयाम है। नाटक की विस्तृत भूमिका, बड़ी घटनावली तथा दीर्घ अवधि तक निर्वाह ऐसे नाटकीय तत्त्व थे जो बहुत समय तक आलोचकों के लिए चर्चा का विषय बने रहे। किन्तु अब पक्ष–विपक्ष और आरोप–प्रत्यारोप का समय समाप्त हो चुका है। चन्द्रगुप्त की आलोचना में ठहराव आ गया है, इसलिए तटस्थ दृष्टि से इस नाटक पर विचार किया जा सकता है।

चार अंकों के इस नाटक के प्रथम अंक का प्रारंभ तक्षशिला के गुरूकुल से होता है। जहाँ नाटक का सबसे प्रभावशाली पात्र चाणक्य अपनी गुरु–दक्षिणा के स्थान पर अर्थशास्त्र का अध्यापन कार्य कर रहा है। मगध का

चन्द्रगुप्त और मालव–राजकुमार सिंहरण उसके शिष्य हैं। तक्षशिला के राजकुमार आम्भीक से विवार हो जाने के कारण गुरु के आदेश से दोनों इस स्थान का परित्याग कर देते हैं। आम्भीक, पर्वतेश्वर से विरोध हो जाने के कारण, यवनों का साथ देने का निश्चय करता है।

मगध की राजधानी कुसुमपुर में नन्द भोग विलास में डूबा हुआ है। सुवासिनी की ओर वह आकृष्ट है। मगध में प्रजा पर अत्याचार हो रहे हैं तथा जन–समुदाय त्रस्त और दुखी है। चाणक्य मगध लौट कर यह सब देखता है। अत्याचार की भट्ठी में उसका और शकटार का परिवार झोंक दिया गया है। उसके पिता को निर्वासन का दण्ड मिल चुका है और शकटार के कुल को अन्धकूप में डाल दिया गया है। उसकी कन्या सुवासिनी को राज–दरबार में नर्तकी का काम करना पड़ता है। मगध की राजकुमारी कल्याणी भी ब्रह्मचारियों के मुंह से नन्द के अत्याचार सुन कर दुखी होती है। मगध की राजसभा में पर्वतेश्वर के प्राच्य देश की राजकुमारी कल्याणी से विवाह न करने के कारण क्रोध और क्षोभ का वातावरण छाया हुआ है। तक्षशिला से लौटे स्नातकों की स्पष्ट बातों तथा चाणक्य को चणक–पुत्र ब्राह्मण जान कर नन्द क्षुब्ध होता है। चर से यवनों के युद्ध की सूचना मिलती है। कल्याणी इस युद्ध में सम्मिलित होना चाहती है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त दोनों पर्वतेश्वर को सहायता देने के पक्ष में हैं, पर नन्द अपमानित होने के कारण उनकी बात नहीं मानता। उन्हें अपमानित कर निर्वासित कर देता है। चाणक्य प्रतिज्ञा करता है कि जब तक नन्द–वंश का समूल नाश नहीं कर लूंगा, शिखा नहीं बांधूंगा। चाणक्य को बन्दी बना लिया जाता है।

तक्षशिला में युवराज आम्भीक पर्वतेश्वर से प्रतिशोध लेने के लिए यवनों की सहायता करते हैं, यहाँ तक कि उद्भाण्ड में सिंधु पर बनते सेतु का स्वयं निरीक्षण कर रहे हैं। अलका की सहायता से सिंहरण उस सेतु के मानचित्र को ले कर मालविका के साथ मालव को प्रस्थान करता है। अलका आम्भीक का यवनों का साथ देने पर विरोध करती है और पिता से आज्ञा पाकर गान्धार में विद्रोह कराने के लिए निकल पड़ती है।

मगध में चाणक्य, चंद्रगुप्त की सहायता से बन्दीगृह के बाहर आता है। वह पर्वतेश्वर से मगध के विरूद्ध सैनिक सहातयता के लिए अनुरोध करता है। चाणक्य और पर्वतेश्वर में इस प्रश्न पर मतभेद हो जाता है। चाणक्य यहाँ से भी निष्कासित होता है। चन्द्रगुप्त और चाणक्य वन–पथ में सेल्यूकस के संपर्क में आते हैं। प्रथम अंक के अंतिम दृश्य में दाण्डयायन के आश्रम में सिकन्दर का चन्द्रगुप्त से परिचय होता है और वह चन्द्रगुप्त को भारत का सम्राट होने का आर्शीवाद देते हैं।

चन्द्रगुप्त नाटक के दूसरे अंक का प्रारम्भ 'कार्नेलिया' से होता है। चन्द्रगुप्त फिलिप्स के आक्रमण से कार्नेलिया के सतीत्व की रक्षा करता है तथा प्रथम दृश्य में ही सिकन्दर के सामने चन्द्रगुप्त उसके सैनिकों को घायल करता हुआ निकल जाता है तथा यवन–रणनीति से वह परिचित हो जाता है। पर्वतेश्वर और सिकन्दर के युद्ध में कल्याणी के कहने पर चन्द्रगुप्त मगध की सेना की टुकड़ी का नेतृत्व करता है। चाणक्य की नीति–कुशलता के कारण अलका और सिंहरण को बन्दीगृह में भी सब समाचार मिलते रहते हैं। चन्द्रगुप्त शूद्रक और मालवों की सम्मिलित सेना का सेनापति नियुक्त होता है। चाणक्य की दूरदर्शिता से प्रभावित होकर राक्षस, मगध की सेना के साथ विपाशा–तट की रक्षा करता है। कल्याणी भी रुक जाती है। सिकन्दर मानव–दुर्ग पर आक्रमण करता है। अलका और मालविका दुर्ग के भीतर हैं। चन्द्रगुप्त नदी–तट से यवन–सेना के पृष्ठ भाग पर आक्रमण करने वाला है। अलका तीर–धनुष ले कर यवर सैनिकों को दुर्ग में उतरने से रोकती है। सिकन्दर दुर्ग के भीतर प्रवेश कर पाता है। सिंहरण के आक्रमण से वह आहत हो जाता है। चन्द्रगुप्त सेल्येकस को सुरक्षित निकल जाने के लिए मार्ग दे कर कृतज्ञता के बोध से उऋण हो जाता है।

प्रस्तुत नाटक का तीसरा अंक विपाशा–तट के सैन्य शिविर से आरंभ होता है। जहाँ राक्षस, चाणक्य के

जाल में फंसा हुआ, टहल रहा है। अलका सिंहरण के ब्याह में सिकन्दर भी स्वेच्छा से सम्मिलित होता है। वृद्ध गान्धार नरेश भी संयोग से भटकता हुआ उसमें सम्मिलित होता है।

चाणक्य की आज्ञा पाकर मगध की राजकुमारी कल्याणी कुसुमपुर लौट जाती है। चाणक्य, सुवासिनी से मिलाने का प्रलोभन दे कर राक्षस से उसकी 'मुद्रा' प्राप्त कर लेता है, जिसका उपयोग वह समय आने पर मगध में विद्रोह कराने के लिए करता है। सिकन्दर के भारत से चले जाने के बाद चाणक्य, मगध में नन्दवंश को नष्ट करने में लग जाता है। चन्द्रगुप्त उत्तरापथ की स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए वहीं रूका रहता है। राक्षस मगध उस समय पहुंचता है, जब नन्द सुवासिनी के साथ बलात्कार करने का प्रयास करता है। चन्द्रगुप्त के माता–पिता बन्दी हैं। नन्द की नृशंसता से नागरिकों में सर्वत्र रोष और असंतोष फैला हुआ है। चाणक्य मालविका को नर्तकी के रूप में नन्द की रंग–शाला में भेजता है और उससे कहता है कि यह पत्र और अंगूठी उसे राक्षस और सुवासिनी के विवाह के एक घण्टे पूर्व दे दे। पत्र पाकर नन्द क्रुद्ध होता है और उसको बंदी बनाने का आदेश देता है। चाणक्य नन्द के शत्रु शकटार से जो भूमि–सन्धि तोड़ कर प्रकट होता है मैत्री करता है। चन्द्रगुप्तभी फिलिप्स को द्वन्द्व–युद्ध में मार कर सार्थवाह के रूप में सैनिकों के साथ मगध पहुंचता है। इसी समय सभी बन्दी मौर्य, मालविका, शकटार, वररुचि, चन्द्रगुप्त की माता गुफा द्वार से बाहर पहुंचते हैं। चाणक्य की योजनानुसार पर्वतेश्वर चुने हुए अश्वारोहियों के साथ नगर द्वार पर आक्रमण करने के लिए प्रस्तुत है। विद्रोहियों और क्षुब्ध नागरिकों का नेतृत्व चन्द्रगुप्त करता है। राक्षस और सुवासिनी को अन्धकूप में डालने की आज्ञा से विद्रोह भड़क उठता है। उत्तेजित नागरिक न्याय की मांग करते हैं। क्षुब्ध जन–समूह को देखकर नन्द विद्रोहियों को बंदी बनाने का आदेश देता है, पर वह प्रजा की इच्छा से राज्य–संचालन करने के लिए विवश हो जाता है। इसी समय चन्द्रगुप्त वहाँ पहुँच जाता है। चाणक्य नन्द के प्रतिकूल सभी अभियोगों को प्रस्तुत करता है, तभी शकटार उसका वध कर देता है। चन्द्रगुप्त को सभी लोग मगध का सम्राट स्वीकार करते हैं।

चौथे अंक में चाणक्य का ध्यान चन्द्रगुप्त के राज्य को निष्कण्टक करने की ओर आकृष्ट होता है। इस अंक के प्रथम दृश्य में कल्याणी पर्वतेश्वर का वध करती है और सब ओर से निराश तथा दुखी हो कर आत्महत्या कर लेती है। कल्याणी की मृत्यु से नागरिकों में असंतोष पैदा होता है। चाणक्य विजयोत्सव रोक देता है। मतभेद होने पर चन्द्रगुप्त के अनुकूल छोड़ कर वह सीमा–प्रान्त की ओर चला जाता है। वहाँ की स्थिति को चन्द्रगुप्त के अनुकूल बनाने का प्रयत्न करता है। अलका की देश–सेवा और निष्ठा का स्मरण दिला कर चाणक्य, आम्भीक को चन्द्रगुप्त के अनुकूल बना लेता है। सुवासिनी को ग्रीक–शिविर में भेज कर कार्नेलिया के हृदय में चन्द्रगुप्त के प्रति प्रेम उद्दीप्त करता है तथा राक्षस को अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न करता है। युद्ध में सिल्यूकस चाणक्य की रणनीति के कारण ही बन्दी होता है। कार्नेलिया से चन्द्रगुप्त का परिणय हो जाने से दो देशों में मैत्री हो जाती है। चाणक्य, राक्षस को मंत्रिपद पर नियुक्त कर स्वयं संन्यास ग्रहण कर लेता है।

**1.7 मुख्य शब्दावली**

शल्य – कांटा

नृशंस – क्रूर

उद्धत – उद्दंड

भवों – भौंहों

मूर्धाभिषिक्त – राज्याभिषेक संपन्न

तपोनिधि – महातपस्वी

विजयवाहिनी – विजय प्राप्त करने वाली सेना

कूटचक्र – कूटनीति का क्रम

श्रेय – कल्याण

सुधासीकर – अमृतकण

दृगजल – आंसू

विकीर्ण – बिखरी हुई

सुवाड़वाग्नि – समुद्र के भीतर की आग

## 1.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

1. वररुचि एक ब्राह्मण था। वह मगध सम्राट नंद का मंत्री था। उसकी राक्षस से मित्रता थी। वररुचि का नाम कात्यायन भी था। बौद्ध लोग इन्हें 'मगधदेशीय ब्रह्मबंधु' भी लिखते हैं। पाणिनी के सूत्रों के वार्त्तिककार यही कात्यायन हैं।
2. नीतिशास्त्र विशारद ब्राह्मण चाणक्य के कई नाम हैं– विष्णुगुप्त, कौटिल्य, चाणक्य, वात्स्यायन, द्रुमिल आदि। चाणक्य काले और कुरूप थे। महाराज नंद के शत्रु थे। उनकी जन्मभूमि पाटलिपुत्र थी। वह मगध में नंद की सभा में अपमानित हुए थे। चाणक्य वेद धर्मावलंबी, कूटनीति विशारद, प्रखर, प्रतिभावान एवं हठी थे। उन्होंने नंद को मारकर चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाया ऐसा माना जाता है।
3. अशोक (सम्राट) का सबसे बड़ा पुत्र था जो एक नीच जाति की स्त्री से उत्पन्न हुआ था। वह डाकुओं के एक दल में शामिल हो गया था और उनके साथ मिलकर ही उसने पाटलिपुत्र पर चढ़ाई की और राज्य जीत लिया। उसके आठ भाई और थे। नौवें नंद का नाम घननन्द था। इसी घननंद ने चाणक्य को अपमानित किया और सभा से निकाल दिया। चाणक्य ने उसके विनाश की प्रतिज्ञा की जिसे पुरी कर उसने चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाया। नंद विलासी, भोगी, क्रूर और मूर्ख था।
4. राजबन्दी मौर्य–सेनापति का पुत्र था। जो मगध का सम्राट बना।
5. ग्रीक विजेता था। चतुर कूटनीतिज्ञ था। भारत को लूटने आया था।

## 1.9 अभ्यास हेतु प्रश्न

1. 'चन्द्रगुप्त' नाटक का सारांश लिखिए।
2. 'चन्द्रगुप्त' के स्त्री पात्रों का चरित्र चित्रण कर बताइए कि कौन–सा पात्र प्रभावशाली है और क्यों?
3. 'चन्द्रगुप्त' के पुरुष पात्रों में से दो प्रभावशाली पुरुषों की चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।
4. 'चाणक्य' और 'चन्द्रगुप्त' पात्रों पर विस्तार से टिप्पणी करें।
5. 'चन्द्रगुप्त' नाटक किन राज्यों, राजाओं और किन परिस्थितियों को लेकर लिखा गया है? विस्तार से विवेचना कीजिए।

6. 'चन्द्रगुप्त' नाटक की गीत–शृखला पर टिप्पणी कीजिए कि ये गीत कितने और क्यों उपयुक्त तथा प्रभावशाली हैं?
7. 'चन्द्रगुप्त' नाटक में स्त्रियों की देशभक्ति और पुरुष पात्रों की देशभक्ति के रूपों पर चर्चा करते हुए उनके प्रभाव एवं परिणाम भी स्पष्ट कीजिए।
8. चाणक्य कूटनीति विशारद होने के साथ एक सामान्य पुरुष की तरह कोमल संवेदनाएँ एवं इच्छाएँ रखता है। उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।
9. 'चन्द्रगुप्त' नाटक के स्त्री पात्र न केवल कोमल हृदया प्रेमिकाएँ हैं बल्कि साहसी, बुद्धिमान योद्धा के गुण भी रखती हैं, सिद्ध कीजिए।
10. 'चन्द्रगुप्त' नाटक में प्रसाद जी की कथानक, भाषा–शैली और शिल्प अद्भुत है। टिप्पणी कीजिए?
11. चरित्र चित्रण कीजिए चाणक्य, चन्द्रगुप्त, सिंहरण, आम्भीक, पर्वतेश्वर, नंद, राक्षस, वररुचि, शकटार, सिकंदर, अलका, कल्याणी, सुवासिनी, मालविका, कार्नेलिया, दाण्ड्यायन।
12. प्रसाद जी भारत को 'अरुण यह' और 'मधुमय देश' क्यों कहते हैं?
13. 'बढ़े चलो' कविता (गीत) का भावार्थ लिखिए?
14. 'बढ़े चलो' में स्वतंत्रता को 'स्वयंप्रभा' और 'समुज्ज्वला' क्यों कहा गया है?
15. 'बढ़े चलो' में नागरिकों का उत्साह वर्द्धन किस तरह किया गया है?
16. मनुष्य की हृदय भूमि से किस तरह की भाव लीलाओं का चित्रण इस नाटक में किया गया है?
17. पुरुष की प्रकृति पर कटाक्ष करते हुए भौरे की कौन–कौन सी विशेषताओं की ओर नायिका संकेत करती है?
18. भारत के प्राकृतिक सौंदर्य एवं श्रेष्ठ संस्कारों का चित्रण करते हुए कार्नेलिया की मानसिकता का चित्रण कीजिए?
19. अलका, कल्याणी और आम्भीक की चरित्रगत विशेषताएँ बताते हुए सिद्ध कीजिए कि माता–पिता और संतानों की मानसिकता में किस तरह अंतर पाया जाता है?

## 1.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

1. डॉ0 मीना पिंपलापुरे – 'चन्द्रगुप्त' – प्रकाशन संस्थान दिल्ली – 1989
2. डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल – प्रसादयुगीन हिंदी नाटक, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 1971
3. प्रसाद युगीन नाटक – डॉ0 रमेश खनेजा – तक्षशिला नाट्य माला, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली–1981
4. प्रसाद के नाटक : स्वरूप और संरचना–गोविन्द चातक, इन्द्रप्रसस्थ साहित्य भारती, दिल्ली।
5. हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास, डॉ0 दशरथ ओझा, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली।